कुछ अहसास





अनकहे अहसास

(गीत ग़ज़ल संग्रह)

ज्योति 'किरण' सिन्हा

सुलभ प्रकाशन

लखनऊ

प्रकाशक		सुलभ प्रकाशन 17 अशोक मार्ग लखनऊ – 226001
ISBN	:	81-7323-151-X
वर्ष	:	2003 ई.
संस्करण	:	प्रथम
मूल्य	:	100.00 रुपये
टाइपसेटिंग	:	कम्पोजिंग प्वाइंट, गोमती नगर, लखनऊ
मुद्रक	:	शिवा आर्ट प्रेस, नवीन शाहदरा, दिल्ली
आवरण सज्जा	:	श्री सतीश चन्द्रा

ANKAHE AHASAS

by **Jyoti 'Kiran' Sinha**



सदियों से बहती

बूँद-बूँद संवेदना में

प्रवाहित है

यह मुट्ठी भर

काव्यधारा



आशीर्वाद

ज्योति ने एक दिन फोन पर बताया कि वो अपनी किताब प्रकाशित कराना चाहती हैं। मुझे हैरत हुई कि अभी शेर कहते दिन ही कितने हुए हैं, क्या एक किताब के लिए जितना मैटर दरकार है- तो मालूम हुआ कि सिर्फ उर्दू की ग़ज़लें और नज़्में ही नहीं, हिन्दी के गीत, दोहे और कुछ रचनाएँ मिलाकर इतना कुछ हो जाएगा कि एक किताब छप सके। मैंने कहा अच्छा रहेगा, इस तरह का हिन्दी और उर्दू सगम नया और मिसाली होगा। इस वक्त हिन्दुस्तान को जरूरत भी है दोनों अहम ज़बानों को मिलकर रहने की और मिलाकर रखने की। बताओ मुझसे क्या चाहती हो? 'आप ही ने कभी कहा था कि जब किताबशाया करानी हो तो एक नजर फिर दिखा देना ताकि जाने-अनजाने कोई त्रुटि न रह जाए, सो चाहती हूँ कि जल्दी ही ऐसा हो जाए। आप जब कहें आ जाऊँ।'

ज्योति का सारा कलाम उसकी अपनी सोच का नतीजा है। मैंने उसे पुराने और दसियों बार कहे हुए ख़यालात या विचारों को दोहराते रहने से हमेशा गुरेज करते पाया। कभी-कभी तो उसे किसी ख़याल, किसी विचार को कविता का रूप देने के लिए न शब्द मिलते न उस मीटर में इतनी गुंजाइश होती कि वो मशा के मुताबिक अपने ख़याल को पेश कर सकती। मैं कहता भी कि ये ख़याल किसी और ग़ज़ल में नज्म कर लेना, मगर वो न मानती और बाल-हठ तक उतर आती। फिर मुझसे जहाँ तक बन पडता उसकी ख़्वाहिश, उसकी इच्छा जिस हद तक पूरी हो पाती पूरी करने में उसकी मदद कर देता। मगर ऐसा कम ही होता।

ईश्वर उसकी इस मेहनत और लगन को कामयाब करें। यही मेरी दुआ है। मैं तो यही कहूँगा कि यह उसके हौसले का नतीजा है कि हिन्दी की रचनाएँ लिखते-लिखते उर्दू ग़ज़ल की वादी में एक दम से आ गई और गज़ल को अपनाने में दिन-रात एक कर दिया। ग़ज़ल की शाह राह पर उसकी रफ़्तार से मुझे यकीन हो चला कि जरूर एक दिन वो अदब में अपनी तरफ से कुछ इज़ाफ़ा करेगी।

किताब आपके हाथ में है इसका फैसला आप खुद कर लें कि मैंने जो कुछ भी ऊपर लिखा है, वो कहाँ तक सच है। हाँ, कोई फैसला करते वक्त यह ध्यान रहे कि घर की तमाम जिम्मेदारियों को खूबसूरती से निभाना और अदब से पूरी तरह जुडे रहना किस कदर हुनरमंदी का काम है। सोचिए तो सही बच्चों की सही दिशा में परवरिश और शौहर की जानिब कोई भी कोताही न होने देना काबिले तारीफ है कि नहीं।

जिन्दाबाद ज्योति, जिन्दाबाद ज्योति

कृष्ण बिहारी 'नूर'

केशरी नाथ त्रिपाठी

संख्या /अ वि स
विधान भवन
लखनऊ

दिनांक



अनकहे अहसास : कथ्य के नये आयाम

अहसास कभी मौन होता है कभी मुखरित। जब इसकी तीव्रता बढती है तो शब्दों में अभिव्यक्ति का स्वरूप धारण कर लेता है। ज्योति 'किरण' सिन्हा के प्रथम रचना संग्रह "अनकहे अहसास" के प्रकाशन के बाद उनका अहसास अनकहा नहीं रह गया। इसी की एक झलक है-

'जीवन ज्यों जलती दोपहरी
स्नेह-छाँव पल दो पल ठहरी
सारा जीवन राह निहारी
हटे न व्यवधानों के प्रहरी'

(सुधियों के साये)

अनुभूतियों की अपनी भाषा होती है। उनका लयबद्ध रूप भी कविता ही होता है। उसके शब्द चित्र से निकली एक छोटी पतली किरण भी कभी कभी हृदय को आलोकित करने वाली ज्योति बन जाती है। ज्योति 'किरण' सिन्हा की रचनाओं की यही विशिष्टता है कि वह पाठक के मन की इतनी गहराई तक पहुँच जाती है कि वह उनमें अपनेपन का अहसास करने लगता है-

'तिनको सा बहते रहना
कूल कगारों पर ढहना
कतरा-कतरा खुशियों से
भरना मन का गहरापन'

(खाली बर्तन)

इस रचना सग्रह मे कवितायें भी हैं, गजल और दोहे भी। सभी में सुन्दर सरल भाषा में अनूठी अभिव्यक्ति है। भावों का पूर्णरूपेण सम्प्रेषण रचनाकार तथा पाठक के मध्य सामंजस्य कारक बन कहीं मन को गुदगुदाता है, कहीं मस्तिष्क को चिन्तन हेतु बाध्य करता है, और कहीं उदासी के चित्रण के बाद जीवन्तता का दृश्य भी उपस्थित करता है-

'बिखराये कजरारी अलकें
सहसा ही फिर भीगीं पलकें
कर सिंगार धरणि मुस्कायी
जब अधर से मधु घट छलके'

(माटी महके)

'तुम स्वर्णिम आभा वाले
बन गये मीत मोहक गहना
मन मन्दिर के दीपक तुम
जगमग-जगमग जलते रहना'

(मन मन्दिर के दीपक)

'सावन की भीगी रातों में
मीत बिना मन अकुलाये'

(निष्ठुर नियति)

मन की उसी अकुलाहट में कवयित्री की अन्तर्दृष्टि कल्पना के व्योम में घिरे हुए बादलों से वार्तालाप करती है-

'व्याकुल बहुत प्यासी धरा,
तू नीर से पूरा भरा।
फिर घुमड़ अपने परस से,
करदे अवनि अंतर हरा।।

निष्ठुर न बन इतना अधिक
ओ नील नभ के प्रिय पथिक।।'

(नील नभ के पथिक)

कवयित्री को यह अहसास भी है उसकी क्षण-क्षण की आकुलता कोई देख आकाश को बूढ़ा कहकर उसे अपनी जिन्दगी का साक्षी बनाया गया है-

'रखे है मुझपे नज़र हर घड़ी ये बूढ़ा फलक
यही हयात के पल-पल का राजदां होगा।'

यादें हैं कि श्वास की प्रक्रिया के साथ चिन्तन के नगर में क्षण-क्षण घटती। 'यादें' कविता में यही सुधियाँ रूपायित हुई हैं-

'चाँदनी खिलती, बिखरती सघन बातों में।
मन उलझता अनकही मृदु मूक बातों में।
सर्द सांसों की छुअन सी अनमनी यादें।
रातभर मुझको जगाती गुनगुनी यादें।।'

(यादें)

यादों की इसी उत्सव गाथा में अचानक ही कोई गुज़रता है-

'कौन गुज़रा खयालों की अंगनाई से
रात-दिन, रातरानी महकती रही।।'

कवयित्री का बार-बार एकाकी हो जाना उसकी अन्तर्यात्रा का सूचक है। आत्म साक्षात्कार कविता को उत्कर्ष देता है-

'सम्मोहन में डूबे-डूबे, सुख सपनों में खो जाते हैं
सूनेपन के सघन कुंज में हम एकाकी हो जाते।।'

(एकाकी)

इसी एकाकीपन में कोई है जो उसकी चेतना का स्पर्श करता है। कवयित्री कृतज्ञ भावुकता से उसे शब्द देती है-

'कोई है जो मुझको छूकर, आँखों में कुछ सपने बोकर
छुप जाता है क्यों गुलशन में, फूलों को मोहक रंग देकर।।'

(कौन है वो)

बहुत कुछ कहकर भी उसके पास बहुत कुछ अनकहा है जिससे वह ज्यादा प्रभावित है-

'शब्दहीन भावों का कम्पन, और अनकही बातें हैं।
एक अनाम गीत सी लगती अर्थहीन ये सांसें हैं।।

कवयित्री की दृष्टि निजता को व्यापक करती हुई जब लोक की परिक्रमा करती है तो उसे अनेक तल्खियों और कड़वी सच्चाइयों का सामना करना पडता है-

'झांझरें चुप हैं, खामोश हैं चूड़ियाँ।
पनघटों पर हैं सन्नाटे डेरा किये।।'

उदासी और पसरे हुए सन्नाटों के बीच ज्योति 'किरन' सिन्हा आशा की ज्योति का उद्योग करती हैं-

'ग़म नहीं ग़म के सिलसिले हैं बहुत।
ज़िंदगी के भी हौसले हैं बहुत।
प्यार की ज़िंदगी का क्या कहना,
यूँ तो जीने के रास्ते हैं बहुत।।'

सत्य ही है कि प्यार के जीवन से श्रेष्ठ, जीवन का कोई अन्य मार्ग नहीं हो सकता। प्यार है कि समय का आभास भी ठहरा देता है-

'तुम मिले तो दिन ठहरते ही नहीं,
रात भी तो रात भर होती नहीं।।'

संसार का समग्र लेखन केवल प्यार की, अनुराग की स्थापना करने का प्रयत्न है। प्रेम है तो जीवन में कड़ुवाहटें नहीं पनपतीं। कवयित्री समस्त प्राणियों को खुश देखना चाहती है। उसकी करुणा उसे बेचैन करती है-

शायर का दिल पत्थर कर दे,
या हर दिल खुशियों से भर दे।।'

यही संवेदना, यही करुणा कवि को शेष संसार से भिन्न बनाती है। जीवन ाश्वत सत्य को उद्घाटित करते ये शेर-

'उड़ गया काफ़ूर सा हाथों में रुक पाया नहीं,
वश नहीं चलता किसी का वक्त की रफ्तार पर।
सर झुकाना ही पड़ेगा छोड़कर अपनी अना,
नाम सबका ही लिखा है काल की तलवार पर।।'

* * *

'ले के उड़ जाती है खुश्बू को हवा,
और फूलों को ख़बर होती नहीं।।'

जीवन की निस्सारता को जानकर क्या कर्म से विमुख हो जाया जाय? इस कोई रचनाकार सोच भी नहीं सकता। कवयित्री यथार्थ के धरातल पर व्याप्त ार के विरुद्ध स्वयं को दीपक की भाँति प्रस्तुत करती है-

'चाहते हैं हम मिटाना इन अंधेरों का वजूद,
बस इसी कारण चिरागों की तरह जलते रहे।।'

यह हौसला किसी कवि का ही हो सकता है। ज्योति 'किरन' सिन्हा अपने को सार्थक करना चाहती हैं। अपनी कविता 'काव्य सृजन' में वे इसे व्यक्त करती हैं-

अंजुरी में चेतना भर, मंत्रपूरित प्राण मन कर।
साधना दीपक जलाकर,
'ज्योति' बन जगमग जलूँ मैं।।'

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवयित्री ने कविता के विभिन्न छंदों-गीत, ।, दोहा, नज़्म आदि में जहाँ एक उत्कृष्ट कल्पनाशील, भावुक प्रणयी हृदय को व्यक्त किया है वहीं यथार्थ की पृष्ठभूमि में पनपती पीड़ा और छितराते ाद को भी अपनी लेखनी के आलोक से छाँटने का प्रयास किया है। कृति की

सभी रचनायें भाषा शिल्प और भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से प्रौढ़ हैं। कवि की सोच उसके हृदय से कदापि भिन्न नहीं होती यही सच्चे कवि की परिभाषा है।

मैं कवयित्री श्रीमती ज्योति 'किरन' सिन्हा को इस कृति के लिए बधाई देता हूँ तथा कामना करता हूँ कि 'अनकहे अहसास' के साथ कवयित्री यश के उत्कर्ष का स्पर्श करे। हिन्दी के सुधी पाठकों में इस कृति का स्वागत होगा ऐसा मेरा विश्वास है।

केशरीनाथ त्रिपाठी
(केशरी नाथ त्रिपाठी)

"साँस साँस गीत की छुअन"

कविता संवेदना का उद्रेक है- भावों का शब्दाभिषेक, मन अनुभूति की सघनता में अकुला उठे तो काव्य स्वतः अंकुरित हो लहलहा उठता है। यह सोच के मथन से निकला ऐसा नवनीत है जिसे चिंतन अत्यधिक निर्मल बना कल्पना से सँवार देता है।

काव्य को किसी एक परिभाषा में बाँधना उपयुक्त नहीं। वह तो बहुआयामी है। कभी सुख-सयोग के भावातिरेक से जन्मता तो कभी व्यथा वीथियों के करील कुंजों से झाँकता मन प्राणों को अपनी अनुभूति से आच्छादित कर देता है।

प्रकृति की रम्यता भी कविता की जन्मदायी बन जाती है जहाँ संवेदना-सरोवर में आकंठ डूबी अनुभूति कमल पखुरियों सी कुसुमित हो उठती है। कविता अन्तः स्त्रोतस्विनी है विशेषकर गीति-काव्य जो छंदों से अलंकृत शब्द विन्यास से सुसज्जित लयात्मक भाव लहरियों पर पुरइन पात सी थिरक-थिरक उठती है। साक्षात सरस्वती माँ की वीणा की झंकार है गीत। इसी कोमल रागिनी के स्वर सँवारता भावानुभूति को शब्द रूप देता एक प्यारा सा नाम ज्योति किरण साहित्यकाश में नवनक्षत्र सा उभर चमक उठा है।

उन्होंने अपने नाम 'ज्योति-किरण' की तरह गीत-ग़ज़ल दोनों में सामान्य रूप से एक साथ कलम चलाई है जो इनकी बहुमुखी प्रतिभा का परिचायक है। वैसे ज्योति किरण ने दोहे, मुक्तक छंद भी खूब लिखे हैं पर गीत-ग़ज़लों में ये अधिक मुखर दिखती हैं।

सोचती हूँ दोनों विधाओं पर एक साथ चर्चा करना किसी एक के साथ न्याय संगत नहीं होगा, सो आज सिर्फ उनके गीतों की बात करने का मन है।

रचनाकार का विभिन्न पहलुओं पर सोचना लिखना अन्तःप्रेरित है। जब कोई घटना, स्थिति परिवेश मन को गहरे संस्पर्श कर उद्वेलित कर दे तो साहित्य स्वयमेव आकार ग्रहण कर लेता है। ज्योति ने भी जब जो अनुभव किया उसे

सहजता से काव्य कलेवर प्रदान करती रही इसी से इनकी रचनाओं में सप्रयास जोड़-तोड वाली नीरसता और बनावटीपन नहीं है।

उल्लसित मनोभाव व्यक्त करता इनका यह गीत जिसमें पूर्ण समर्पण और सुखानुभूति का उत्कर्ष है-

"बावरिया बन नाम तुम्हारे
लिखूँ प्रीत के गीत"

नवकलिका सी खिलती-महकती प्रिय संसर्ग की प्रमल आवेग में आकंठ डूबी कह उठती है -

"प्रथम छुअन की खुशबू मलकर
मधुऋतु सी मैं महकूँ
साँसों की उन्मुक्त नदी में
डूबूँ नहाऊँ और बहकूँ"

ज्योति के कुछ गीत उन्मुक्त रागात्मकता और प्रिय सानिध्य की वांछनीयता से ओत-प्रोत हैं। कहीं मनमनुहर करती राधिका सा भाव व्यक्त हुआ है तो कहीं मीरा सी अपने प्रिय के रंग में रंगी पवन पंछी बनी दिखती है।

उड़ूँ स्वप्न के पंख लगा
जाऊँ पुरवा से जीत
मनमोहन घनश्याम बनो तुम
मैं मीरा की प्रीत

सुखद प्राप्य को सहेज रखने की लालसा और खो जाने की आशंका नारीमन का स्वभाव विवशता है, इसी के वशीभूत हो कवयित्री ने मनोभाव व्यक्त किये हैं -

"मन मंदिर के दीपक तुम
जगमग-जगमग जलते रहना"

सुख-दुख, मिलना-बिछुड़ना जीवन क्रम है, अतीत में भरमना नियति।

ज्योति भी प्रिय विछोह का संताप सहती सुधियों की छाव में विरमति विकल हो उठती है

सोंसों की सरिता उफनाये
लहर-लहर सुधियों के साये"

प्रिय से विलग अकेलेपन की तिमिराच्छादित वीथियों में हताशा के काँधे सिर टिकाये अपने दर्द उकेरने को विवश हो जाती है-

"समय सिंधु उत्ताल तरंगें
रेत-रेत हो गयी उमंगें
छुपी नयन की गहराई में
पीड़ा की अनगिनत सुरंगें"

कवयित्री का लेखन सिर्फ एक पक्षीय - संयोग-वियोग तक ही सीमित न रह जन जीवन के अनेक आयामों को समेटता चला है। "गंगा" शीर्षक कविता में भागीरथी का मानवीकरण कर उन्हीं के मुख से उनकी पीडा कहती है -

"काशी के घाटों में विचरती
गंगा अक्सर सोचा करती
स्याह हुआ कैसे ये अम्बर
हुई मरुस्थल कैसे धरती"

धार्मिक परिप्रेक्ष्य में उद्धृत ये पंक्तियाँ ज्योति की आध्यात्मिक सोच की परिचायक हैं। यथा -

"युग-युग से बहता जीवन जल
फिर भी कम न हुआ हलाहल
सदियाँ बीती धोते-धोते
मलिन हुई पापों को ढोते"

प्रकृति की सुषमा तो सभी को सम्बोधित, आकर्षित करती है पर विरही मन को संतप्त भी कम नहीं करती। सुखद क्षणों में जो मन-भावन लगती है वही विपरीत परिस्थितियों में दुखदायी बन मुँह चिढ़ाती दिखती है। निम्नांकित पंक्तियों में वही दर्द की चुभन है:-

"मनाकाश में घिरते धुँधलके
रंग साँझ के गहरे-हल्के"

समय की गतिमयता के साथ क्षण-क्षण बदलती विरूपता लिये आकृतियों के बिम्ब विधान रचे हैं कवयित्री ने -

"दूर क्षितिज में धूप सिमटती
मुट्ठी भर फिर रात छिटकती
चॉद अधूरा टूटा प्याला
बूँद-बूँद अनुरक्ति टपकती"

पावस की रिमझिम फुहार जहाँ तप्त धरा को सिंचित कर हरा-भरा कर देती है वहीं जन मन भी रस-सिक्त हो उठते हैं पर विरही मन कितने अनमयस्क हो उठते हैं यह ज्योति 'किरण' की इस कविता में स्पष्ट परिलक्षित है-

"सावन की भीगी रातों में
मीत बिना मन अकुलाये"

सुख-दुख का प्रत्यावर्तन सहती कवयित्री अपनी ही जिन्दगी से वार्तालाप करती दिखती है:-

"अरे ज़िन्दगी तेरे गाँव में
चले धूप में और छाँव में
हर रंग के मौसम मिले
सुख-दुख पले इसी ठाँव में"

अकेलेपन में भरमती कवयित्री कभी-कभी सर्वत्र बेगानापन और निरर्थकता का अनुभव करती है तब सहज ही सोच बोझिल हो जाती है :-

बूढ़े गगन का सूनापन
अंधे कुयें सा मेरा मन
भरा-भरा रहता है फिर भी
खाली लगता यह बर्तन

रचनाकार का मन राग विराग ओढ़े सुख-दुख के कुंज कछारों में विरमता कभी सुखद स्मृतियों के संसर्ग से आल्हादित हो उठता है तो कभी पीर लहरियों संग



भवर उलझता बहने लगता है तब भावातिरेक निःसृप्त हो उठती है-

दर्द का उँगली पकड़ना
बहुत खलता है
होके अपना मन हमें ही
निरत छलता है

इन पंक्तियों में नियति न बदल पाने की विवशता और छटपटाहट घनीभूत होकर बिखर गयी है

समय से समझौता कर उर्जित दिशा में मोडने का प्रयास ही कविधर्म है जिसका निर्वाह कवयित्री ने बड़े सुन्दर, संयत ढंग से किया है -

"स्वप्नवत कविता बनूँ मैं,
कल्पना के रंग बुनूँ मैं
सुप्तभावों को जगाकर
लेखनी माथे लगाकर
तार छू अभिव्यंजना के
मौन का कंपन सुनूँ मैं"

ज्योतिकिरण की यह कविता यद्यपि इस प्रथम संकलन से उद्धृत है पर इसकी परिपक्वता भाषा सौष्ठव इनके उत्तरोत्तर ऊँचे सोपानों पर चढ़ने का संकेत है। नियति, परिस्थिति और वैषम्य के मध्य घुटने सिसकने की विवशता न स्वीकार लेखनी का सहोदर बना प्रणाम करने का संकल्प विलक्षण सोच का परिचायक है।

नियति जन्य परिस्थिति की तपती धूप में यथार्थ की पथरीली भूमि पर बैठ बूँद-बूँद पीर गरल पीने की विवशता स्वीकारने की जगह विषम स्थितियों में भी हँसते-बोलते रहकर सोच को सही दिशा दे आगे बढ़ना ही ज्योति ने सही समझा है।

"निज अखंडित उर बनाऊँ
फिर अनश्वर सुर सजाऊँ
छंदमय हो सृष्टि जिसमें
शब्द शाश्वत वो चुनूँ मैं

गीत ऐसा ही लिखूँ मैं
गीत ऐसा ही बुनूँ मैं''

यहाँ उद्धृत इनकी ये अंतिम पंक्तियाँ इनके संयत सकल्पित सुलझे मन की परिचायक हैं।

ज्योति मेरी छोटी बहन सरीखी है। उर्ध्वमुखी सार्थक कृतित्व की ही तरह सरल, स्नेहिल सम्मोहक व्यक्तित्व वाली यह कवयित्री दिनों दिन प्रगति करें यही आकाक्षा है।

इनके काव्य का यह प्रथम पुष्प सुधी सुविज्ञ जनों के मध्य अपनी सुवास बिखेर और-और की प्यास जगाये यह मेरा आशीष है।

सस्नेह
सावित्री शर्मा



किरण-किरण उजाला

कायनात की आखिरी सरहदों को पार करने की कोशिश करती सोच और घर की दहलीज़ को कायनात की आखिरी सरहद समझने वाले संस्कार। यह है इक्कीसवीं सदी की भारतीय नारी का स्वरूप, जो मुझे ज्योति किरण सिन्हा की शख्सियत और शायरी दोनों में दिखाई दिया। ज्योति किरण सिन्हा अगर एक तरफ बडी तेज रफ्तारी से बदलती दुनिया और उसके साथ बदलती विचारधारा के साथ कदम से कदम मिला कर चलने का हुनर जानती है तो दूसरी तरफ उन्होंने भारत के अतीत की सभ्यता और भारतीय नारी के आदर्शों ओर सस्कारों को एक गृहणी एक पत्नी, एक माँ-एक मेजवान और एक शायरा के रूप में पूरी तरह निभाया है। घर से बाहर की दुनिया में अपनी सामाजिक और साहित्यिक व्यस्तता और लोकप्रियता को उन्होंने वक्त भी दिया और कलम की रिश्तेदारियाँ भी खूब निभायीं मगर मूल रिश्तों और घरेलू जिम्मेदारियों की कीमत पर नहीं और शायद यही वजह है कि उनके डाक्टर पति और दो फूल जैसे बच्चे (नुपुर, शातनु) उनकी शायरी के सबसे बड़े कद्रदान हैं और यही बड़ी बात होती है कि कलाकार की कला को उसके घर मे भी तस्लीम किया जाये।

ज्योति बुनियादी तौर पर हिन्दी की कविताओं और गीतों के साथ शायरी की दुनिया में दाखिल हुई थी और आज भी उनका यह सफर जारी है,मगर जनाब कृष्ण बिहारी 'नूर' की रहनुमाई में शुरू किया तो ऐसा लगा जैसे एक नया लहजा ग़ज़ल की दुनिया में अपनी गूँज छोड़ रहा है। ग़ज़ल की तमाम पाबंदियों को निभाते हुये काफ़िया रदीफ और बहूर की हदबंदियों के अंदर रहते हुये ऐसे नये अछूते और अनकहे ख्यालात और एहसास ज्योति जी की गज़लों में आये कि गजल के पारखी चौंकने पर मजबूर हो गये।

सदियों पहले प्रेम दीवानी मीरा ने अपना दुख यूँ ही जाहिर किया था "सूली ऊपर सेज पिया की किस विध मिलना होय" मगर आज की जिदगी समझौतो, मसलहतों और सामाजिक मजबूरियों की जिन्दगी है: सो ज्योति किरण यूँ

लिखती हैं :-

कितना कठिन सफर है मुहब्बत का ये सफर
चलना भी साथ-साथ है रहना भी दूर-दूर

या

फ़ासले भी दरमियाँ के कम न कर पाये कभी
दो किनारों की तरह हम साथ भी चलते रहे

या

आज के सामाजिक और पारिवारिक समझौतों पर उनका यह अहसास-

लोग रिश्तों की डोर थामें हुये
साथ हैं फिर भी फासले हैं बहुत

मगर वही ज्योति किरण जब एक गृहणी बनकर सोचती है तो यूँ सोचती है-

उसका हर दुख हर इक ख़ुशी उसकी
मैंने तो जी है ज़िंदगी उसकी
उम्र भर का किया है यूँ सौदा
साँसें मेरी हैं ज़िंदगी उसकी

यह सिपुर्दगी, यह समर्पण सिर्फ भारतीय औरत के यहाँ मिल सकता है और मेरा जी चाहता है कि इन अश्आर के लिये ज्योति जी के बजाय उनके पति और एस.जी.पी.जी.आई. के सीनियर कार्डियोलाजिस्ट प्रो० नकुल सिन्हा को मुबारकबाद दूँ। यहीं मुझे ज्योति जी का एक और शेर याद आ रहा है। आज के 'स्टार कल्चर' और 'इन्फॉरमेशन टेक्नोलॉजी रिवोल्यूशन' ने दुनिया को बहुत छोटा कर दिया है और हमारी नई पीढ़ी को अपने गौरवशाली अतीत से काटकर अलग कर दिया है। हो सकता है कोई नया वर्ल्ड-आर्डर वजूद में आ रहा हो, हो सकता है कोई 'इन्टरनेशनल सोसाइटी' बन रही हो मगर हम जब अपने बच्चों को आदाब या नमस्ते की जगह हाय और बाय कहते देखते हैं तो ऐसा लगता है जैसे हमारे अंदर कुछ टूट गया हो कुछ भर गया हो। ज्योति किरण ने जिनका ताल्लुक

अगर एकदम नयी पीढी से नहीं है तो पुरानी पीढी से भी नहीं है इसे महसूस किया और बडी सादगी से दो मिसरों में कह दिया

अपनी तहज़ीब याद है हमको
यही इस दौर में ग़नीमत है।

ग़ज़ल के दामन का फैलाव आसमान की तरह है जिसमें बेशुमार सूरज, चाँद सितारे चमक रहे हैं। वली दकनी, कुली कुतुबशाह, सिराज औरंगाबादी, मीर, गालिब, मोमिन से रघुपति सहाय 'फ़िराक' नासिर काज़मी, मजरूह तक और उसके बाद नीरज, दुष्यन्त कुमार, निदा, शहरयार और कृष्ण बिहारी 'नूर' तक ग़ज़ल ने कई सदियों का फ़ासला तय किया है और इस सफर में हर मील के पत्थर पर उसके लहजे में कुछ तब्दीली कुछ ताज़गी आयी है- मगर बीसवीं सदी की आखिरी चार-पाँच दहाइयों में इस काफिले में औरत अपनी सदियों की घुटन लिये दाखिल हुई तो ऐसा लगा जैसे ग़ज़ल की हवेली का एक दरवाज़ा जो सदियों से बंद था अचानक खुल गया हो और उसके घनक रंग, रौशनियाँ, ताजा हवा के झौंके और बहुत सी अनकही, अनसुनी आवाजें दाखिल हो रही हों। शायर शाज तमकनत एक बात को अपनी सोच के आइने में यूँ कहता है-

रहम कर मैं तेरी पलकों में हूँ आँसू की तरह
किस कायनात की बुलन्दी से गिराता है मुझे

मगर यही अहसास एक शायरा के यहाँ यूँ उजागर होता है :-

वह अक्स बन के मेरी चश्मेतर में रहता है
अजीब शख्स है पानी के घर में रहता है।

शायरात का यह काफिला जब ग़ज़ल की मुख्यधारा से जुड़ा तो लगा कि ग़ज़ल का अधूरापन खत्म हो गया हो। परवीन शाकिर, बानो दाराब 'बफा', किश्वर नाहीद जैसी शायरात ने ऐसी शायरी की जैसे ख़यालात और जज़्बात पर बँधा सदियों का बाँध टूट गया हो और नारी चेतना एक तेज रफ़्तार नदी की तरह बह निकली हो।

मैं सच कहूँगी मगर फिर भी हार जाऊँगी
वो झूठ बोलेगा और लाजवाब कर देगा

'परवीन शाकिर'

वो तो खुश्बू है फ़ज़ाओं में बिखर जायेगा
मसअला फूल का है, फूल किधर जायेगा।

'परवीन शाकिर'

हर आते जाते राही में सूरत तेरी ढूढ़ा करते हैं
हम गलियों के मोड़ों पे लगी जलती हुई कंदीलों की तरह

''बानो दराब बफा''

मेरी खलवत में जहाँ गर्द जमी पाई गई
उंगलियों से तेरी तस्वीर बनी पाई गयी

'बानो दाराब बफा'

वो गया कि दरोबाम हो गये तारीक
मैं उसकी आँख से घर का दिया जलाती थी

'आबदा करामत'

जो बहनें मुफ़लिसी में भाइयों पर बोझ होती हैं
वो मर जायें तो उनके हाथ में शाखे हिना रखना

'मलका नसीम'

गरजे कि शायरात ने ऐसी शायरी की जिस पर बीसवीं सदी की गज़ल फक्र ...र सकती है।

ज्योति किरन सिन्हा की इक्का-दुक्का गज़लें किस्तों में सुनी थीं मगर जब ...नकी बहुत सी गजलें एक साथ पढ़ीं तो अदाजा हुआ कि शायरात के इस काफिले ... एक अहम् मुसाफिर का इजाफा हुआ है। उनके हर शेर पर तबसरा करूँगा तो ...ात बहुत तवील हो जायेगी। इसलिये उनके चंद शेर जो मुझे बहुत पसद आये ...श कर रहा हूँ, जिनमें एक तरफ अगर घर ऑगन के नन्हें-नन्हें सच और रिश्तो ... बिखराव का दर्द मिलेगा तो दूसरी तरफ समाज की नाहमवारियाँ, आने वाले ...ल से मायूस इसानियत, मगर उम्मीदों के दिये जलाती कलाकार की सोच दिखाई

'मुतमइन कोई सूरत न कर पायी क्या
ज़िंदगी तू जो चेहरे बदलती रही''

* * *

बेजबा बेंजान से सब हो गये दीवारों दर
शहर में हो जाये कुछ भी कुछ ख़बर होती नहीं

* * *

सोने का हो दिया कि मिट्टी का
है अहम् सिर्फ रौशनी उसकी

* * *

जाने किस बुत में मिल जाये हमको, पिछली पहचानें
ख़ुद को ढूढ़ा करते हैं यादों के तहखानों में

* * *

लेके उड़ जाती है खुश्बू को हवा
और फूलों को ख़बर होती नहीं

* * *

रोज मेहमाँ कहाँ वो होते हैं
आज की रात, रातभर कर दे

* * *

पीले पन्नों में यादों के जो था लिखा
नाम वह मैं सभी से छुपाती रही

* * *

उम्मीदों के साये-साये जाने कैसी लौ थी वह
आये गये कितने ही मौसम दिल का दिया जलता ही रहा

* * *

मंजिलें मिल जायेंगी कुछ हौसला भी चाहिये
जो न तैय की जा सके ऐसी डगर होती नहीं

* * *

मैं यह दावा तो नहीं करूँगा कि ज्योति किरण सिन्हा के रूप में एक और परवीन शाकिर या बानो दाराब वफा का नाम ग़जल के काफ़िले में शामिल हो गया है मगर इतना जरूर कहूँगा कि ज्योति जी ने अपनी शायरी में किरण किरण उजाला बिखेरा है और ऑख वाले इस उजाले का इस्तेकबाल करेंगे।

अभी ज्योति जी की ज़िंदगी चढ़ते सूरज का सफर है और मुझे यकीन है कि आने वाले कल में वह अपनी काव्य साधना से अनिश्चितता के गलियारों में भटकती इंसानियत के लिये अपने इस दावे को सच कर दिखायेंगी कि-

"हमसे ही पूछेंगी सदियाँ रस्ता अपनी मंजिल का
मुस्तकबिल में कोई न भटके, नक्शे कदम वो छोड़ेंगे।"

'मेराज फैजाबादी'



मन की

मैं अक्सर सोचती हूँ कि मन तो एक अनन्त अनजान सफर के उस मुसाफिर की तरह है जिसका न उसे आदि पता है न अन्त जिसका उसके कदमों पर वश है ही नहीं। ये कदम उठते हैं तो किसी के बुलाने से और किसी के एक इशारे से ही रुक भी जाते हैं। जिसका वश नहीं उसके हँसने-रोने में, कभी बातबात पर छलक आती हैं आँखें तो कभी बेवजह ही खिलखिलाते हैं अधर। कभी मन का ये मुसाफिर दिशहीन हवाओं के झूले पर चढ़ पर्वतों को ठोकर दे अपनी पैंगें बढाता है तो कभी सोच की शात नदी के किनारे बैठ उसकी खामोशियाँ बुनता है, कभी तेज और कभी सुस्त कदमों से चलता हुआ अनदेखी अनजानी मंजिलों की जानिब मुसलसल बढता ही जाता है। इस दौरान वह समझौतों के कितने मील के पत्थर लाँघता हुआ सम्बन्धों के ऐसे पड़ाव पर ठहरता है जिसे वह अक्सर आखिरी मंजिल समझ अपना आशियाँ बनाने लगता है। लेकिन बहुत जल्दी ही यथार्थ की आँधियाँ उसे फिर उखाड़ देती हैं उस ज़मीन से और वह फिर चल पड़ता है उसी अन्जान अनदेखे सफर पर शनै शनै।

कभी मन अकेलेपन की धूप से घबराकर यादों की झीनी-झीनी चादर ओढ़ लेता है तो कभी वह तन्हाइयों से ऊबकर गुजरे लम्हों की बारात अपने पीछे सजा लेता है। इस पूरे सफर के दौरान अगर मन का कोई सच्चा हमराह है तो वे हैं उसके ख्वाब। ये ख्वाब ही एक सच्चे प्रेमी और साधक की तरह मन के हर रग हर रूप को आत्मसात कर लेते हैं और स्वयं मन का प्रारूप बन जाते हैं। ख्वाब या स्वप्न ही सुख-दुख की हर धूप-छाँव में मन का साथ देते हैं। हाँ, ये ख्वाब अगर मन के सच्चे दोस्त हैं तो रकीब भी। ये अगर रहबर हैं तो वे राह भुला भी देते हैं।

सच्चे मायने में देखा जाये तो स्वप्न ही इस अजन्में, अनश्वर मन की अनथक, अनन्त यात्रा के पद चिन्ह हैं। मन के ये नक्शे पाँ मन की आवारगी का

पूरा खुलासा कर देते हैं। वे बता देते है कि वह दर्द की किन गलियों से होकर गुजरा है, अहसास के किस आँगन से खुशबुये चुरा लाया है, अनुभवों के किस पथरीले पथ पर कब कब लहूलुहान हुआ है, प्रेम की एक बूंद के लिये कितने जलते सहराओं की खाक छानता फिरा है या फिर सुकून की एक नींद के लिए कितने दरख्तों के सायों में पनाह ली है।

मैं कभी-कभी ऑखें बदकर चुपचाप अपने मन की पदचाप सुनती हूँ, उसकी आवारगी के नक्शे पॉ को कागज में ढालने की कोशिश करती हूं तो वे कभी गुनगुनाती ग़ज़ल बन जाते हैं या कभी भावुक गीत या कभी सारे बंधनों से मुक्त काव्यात्मक छंद और मैं एक नयी दृष्टि से अपने मन को पढने की, पहचानने की कोशिश करती हूँ। मन शायद पूरी तरह से शब्दों की कैद मे न आया हो मगर उसका कुछ अंश तो कविता के दामन मे अंकित हो ही जाता है।

अपना मन पढ़ने की यह नयी दृष्टि मुझे मिली साहित्य के उन साधकों से जो अपनी साधना से चेतना के उस स्तर तक पहुँचे जहाँ वे अपने मन के साथ दूसरों के मन को भी प्रतिबिम्बित करने का हुनर रखते हैं।

मैं खुशनसीब हूँ मुझे ऐसे उस्ताद, ऐसे राहबर मिले जिन्होंने अख़्लाक की वह रौशनी मेरी नजर को दी और अपनी वालिदाना शख्सियत की ऐसी स्नेहमयी छॉव मेरी राहों में बिछाई कि मैं उनके अनुभवों की उँगलियाँ पकड चेतना की सीढ़ियों में कदम रख सकी।

मैं ऋणी हूँ मोहतरम उस्ताद जनाब कृष्ण बिहारी 'नूर' साहब की, जिन्होंने मुझे एक अच्छे कूजागर (शिल्पकार) की तरह अपने जज्बात और अहसास की गीली मिट्टी को संवेदनशील उर्दू शायरी में ढालना सिखाया।

जहॉ नूर साहब ने मुझे ग़ज़लों के मिज़ाज से वाकिफ कराया वहीं साहित्य भूषण से अंलकृत साहित्य की सतत् साधिका श्रीमती सावित्री शर्मा के ममतामयी और स्नेहपूर्ण स्पर्श को पाकर मेरी काग़जों में ढली बूँद-बूँद सवेदना जी उठी और सरस हो मेरे निष्प्राण गीतों में रच बस गयी।

मैं कोटि कोटि नमन करती हू और प्रार्थना करती हू उन सभी ज्ञान और अनुभवों के धनी श्रेष्ठ साहित्यकारों से कि वे इसी तरह अपने आशीर्वाद की छॉव तले नवाकुरों को पल्लवित होने का सौभाग्य दें।

यूँ तो अनगिनत नाम और अनगिनत चेहरे हैं जिन्होंने मुझे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कुछ न कुछ सिखाया अवश्य है। खासतौर पर मै आभारी हूँ सभी साहित्यकार मित्रों की जिनके साहित्य ने मुझे अपना आकाश स्वय तलाशने की प्रेरणा दी।

साहित्यलेखन का जो बीज पापा और मॉ (स्व० श्री विशम्भर नाथ और श्रीमती शीला श्रीवास्तव) ने बोया था वह श्वसुर श्री कृष्ण शकर सिन्हा की स्नेह वर्षा और पतिदेव नकुल जी की अनुराग की धूप में अकुरित हुआ। शशि दीदी, दिलीप भाई और समस्त परिवार की हौसला अफजाई ने खाद का काम किया और अहसास का यह छोटा सा गुलदस्ता आपके हाथ मे है जो आपके स्नेह और आशीर्वाद की खुशबू पाने के लिये प्रतीक्षारत है।

ज्योति 'किरण' सिन्हा

सम्पर्क सूत्र–
ज्योति 'किरण' सिन्हा
टाइप V A/9
सजय गाधी आयुर्विज्ञान सस्थान परिसर
रायबरेली रोड, लखनऊ
फोन · 668661, 668700-900
Ext 2224



सरस्वती वंदना

मातेश्वरी सरस्वति चरणों में तेरे करूँ नमन
अभिज्ञान के प्रकाश से अज्ञान का तू कर दमन

अवगुण भरे आँचल को मेरे
मोह के ताने-बाने घेरे
मन के निश्छल चिर गगन में
पाप के बादल घनेरे

स्वीकार लूँ हर भूल को
मैं लोभ का कर दूँ हवन

रहता नहीं अब योग में
मन लिप्त है हर भोग में
वस में नहीं अब इन्द्रियाँ
तन मन ग्रसित हर रोग में।

निष्पाप कर हर आत्मा-
है वासना का धुआँ गहन-

दुनिया के मायाजाल में
कलियुग के ऐसे काल में
है झूठ का ही भरम यहाँ
सच्चाई की है चमक कहाँ

है भटक रहा मानव यहाँ
माँ रोक ले तू ये पतन

मातेश्वरी सरस्वती चरणों में तेरे करूँ नमन-



काव्य सृजन

स्वप्नवत कविता बनूँ मैं
कल्पना के रंग चुनूँ मैं

सुप्तभावों को जगाकर
लेखनी माथे लगाकर
तार छू अभिव्यंजना के
मौन का कम्पन सुनूँ मैं

स्वप्नवत कविता बनूँ मैं
कल्पना के रग चुनूँ मैं

अंजुरी में चेतनाभर
मंत्रपूरित प्राण मनकर
साधना दीपक जलाकर
ज्योति बन जगमग जलूँ मैं

स्वप्नवत कविता बनू मैं
कल्पना के रंग चुनूँ मैं

प्रीत का इक बीज बोकर
वेदना की धूप सेकर
नीर प्लावित इन दृगों में
काव्यतरु सिंचित करूँ मैं

निज अखंडित उर बनाऊँ
फिर अनश्वर सुर सजाऊँ

छंदमय हो सृष्टि जिसमें
शब्द शाश्वत वो चुनूँ मैं
गीत ऐसा ही लिखूँ मैं
गीत ऐसा ही बुनूँ मैं



खाली बर्तन

बूढ़े गगन का सूनापन
अंधे कुयें सा मेरा मन
भरा-भरा रहता है फिर भी
खाली लगता ये बर्तन

सन्नाटों की प्रतिध्वनियाँ
जुड़ती अँधेरों की कड़ियॉ
शून्य में गिरता उठता
सोच का प्रत्यावर्तन

शर्तों पर ही रहने को
जीवन अपना कहने को
अंतहीन अन्जान सफर
पल-पल घुलता जाता तन

तिनकों सा बहते रहना
कूल कगारों का ढहना
कतरा-कतरा खुशियों से
भरना मन का गहरापन

दुख की लहरों का नर्तन
चिंताओं का ही मंथन
साँस-साँस सोचा करती
कैसा सुख कैसा क्रंदन

नहीं झूठ से सच डरता
तृष्णा का मन कब भरता
समय के दर्पण से छुपता
कब तक कोई परिवर्तन



यादें

रातभर मुझको जगाती गुनगुनी यादें
खेलती हैं मौन से मृदुभाषिणी यादें

कौन सा मैं नाम दूँ
सम्बन्ध को अपने
इन्द्रधनुषी नयन मे
तिरने लगे सपने

कल्पना के गाँव में बहुवेषिनी यादें
रातभर मुझको जगाती गुनगुनी यादें

देर तक खामोशियाँ
बात करती हैं
शून्य के विस्तार में
संगीत भरती हैं

नेह में आकंठ डूबी रुनझुनी यादें
रातभर मुझको जगाती गुनगुनी यादें

चाँदनी खिलती बिखरती
सघन रातों में
मन उलझता अनकही
मृदु - मूक बातों में

सर्द साँसों की छुअन सी अनमनी यादें
रातभर मुझको जगाती गुनगुनी यादें

भोर की नन्हीं किरन ने
झाँक कर देखा
खींच दी परछाइयों ने
पीर की रेखा

शिखर संयम से पिघलती मोहिनी यादें
रातभर मुझको जगाती गुनगुनी यादें



प्रीत के गीत

बावरिया बन नाम तुम्हारे
लिखूँ प्रीत के गीत
मनमोहन घनश्याम बनो, तुम
मैं मीरा की प्रीत

प्रथम छुअन की खुशबू मलकर
मधुऋतु सी मैं महकूँ
साँसों की उन्मत्त नदी में
डूबूँ नहाऊँ - बहकूँ

उड़ूँ स्वप्न के पंख लगा
जाऊँ पुरवा से जीत
मनमोहन घनश्याम बनो तुम
मैं मीरा की प्रीत



ओढ चाँदनी की चूनर मैं
झूम-झूम के गाऊँ
दर्पण देख-देख दुल्हन सी
मन ही मन मुस्काऊँ

नयन नयन कुछ कह छुप जाऊँ
पंथ अगोरे मीत
मनमोहन घनश्याम बनो तुम
मैं मीरा की प्रीत



दर्द की उँगली पकड़ना

दर्द की उँगली पकड़ना
बहुत खलता है
होके मन अपना हमें ही
निरत छलता है

पास आ तन्हाइयाँ
देखें हँसें हमको
झिलमिली नन्हीं 'किरण'
क्या लाँघती नभ को

साँझ का घिरता धुँधलका
साथ चलता है
दर्द का उँगली पकड़ना
बहुत खलता है

भूलना चाहो जिसे
वह याद आ जाता
नेह बंधन में बँधा
मन चैन कब पाता

दीप सा तिल तिल हृदय
दिन-रात जलता है
दर्द का उँगली पकड़ना
बहुत खलता है



नील नभ के पथिक

ओ नील नभ के प्रिय पथिक
सुन बात मेरी रुक तनिक

व्याकुल बहुल प्यासी धरा
तू नीर से पूरा भरा
घिर घुमड़ अपने परस से
कर दे अवनि अंतर हरा।

निष्ठुर न बन इतना अधिक
सुन बात मेरी रुक तनिक

दिनकर तपाये दिवस भर
कृषकाय लगते सरित सर
तू विचरता आकाश में
छिन पाँव धरता न धरणि पर

कुछ देर तो इक ठाँव टिक
सुन बात मेरी रुक तनिक

कुम्हला गये उपवन-सुमन
पतझार ओढ़े बाग-वन
तरु ताप से अकुला रहे
मरुथल सरीखे शुष्क मन

गीले नयन टेरें श्रमिक
सुन बात मेरी रुक तनिक

बिन पंख तू उड़ता फिरे
संताप से जन-जन घिरे
उल्लसित जड़ चेतन हुये
जब रिमझिमी बूँदें गिरे

पागल! तेरा जीवन क्षणिक
सुन बात मेरी रुक तनिक

है खेल मोहक दृष्टि का
प्रतिफलन स्नेहिल वृष्टि का
जल के बिना सब शून्य है
तू प्राण सारी सृष्टि का

मनुहार मत करवा अधिक
सुन बात मेरी रुक तनिक

ओ! नील नभ के प्रिय पथिक।



माटी महके

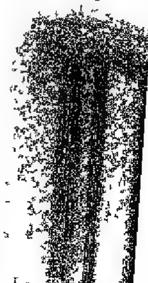
सौंधी-सौंधी माटी महके,
बरसे पावस धन रह-रह के,

बिखरायें कजरारी अलकें
सहसा ही फिर भीगी पलकें
कर सिंगार धरणि मुस्कायी
जब अंबर से मधु घट छलके

पंख खोल सुधि पाखी चहके
बरसे पावस घन रह-रह के

पीर पुरानी ले अँगड़ाई
देख रही अनमन अँगनाई
रोम-रोम पुलकित कर देती
मंद-मदिर मोहक पुरवाई

मन-मयूर पागल बन बहके
बरसे पावस घन रह-रह के



महका मौसम बहुत रुलाये
प्रियतम बिन अतस अकुलाये
आग लगे बैरी सावन को
मीत-मिलन की प्यास जगाये,

सॉस-सॉस विरहाग्नि दहके
बरसे पावस घन रह-रह के

भोर सॉझ सी लगे कुहासी
चादर बुनती बैठ उदासी
कंत-पथ पर नयन बिछे हैं
एक बार आ मिलो प्रवासी

सच हो जायें स्वप्न सुबह के
बरसे पावस घन रह-रह के।



एकाकी

सूनेमन के सघन कुंज में
हम एकाकी हो जाते
पढ़कर मौन अधर की भाषा
शब्द हमारे खो जाते

तुम बिन है अनमन अँगनाई
सुधि आ जाती ले अँगड़ाई
हृदय द्वार पर बजती रहती
साँसों की सुमधुर शहनाई

दबे पाँव आ दर्द कहीं से
चुभती नागफनी बो जाते
सूनेपन के सघन कुंज में
हम एकाकी हो जाते

खामोशी का सागर लहरे
दर्द दे रहा तट पर पहरे
बंजारे पुरवा के झोंके
पल दो पल को ही बस ठहरे

सम्मोहन में डूबे डूबे
सुख सपनों मे खो जाते
सूनेपन के सघन कुंज में
हम एकाकी हो जाते

शबनम गिरती नील गगन से
धरा झाँकती हरित वसन से
अलि करते कलि से रंगरेली
देख रहे हम भरे नयन से

व्याकुल जीवन की अभिलाषा
बरस-बरस ऑसू धो जाते
सूनेपन के सघन कुंज में
हम एकाकी हो जाते



मनमंदिर के दीपक

मनमंदिर के दीपक तुम
जगमग जगमग जलते रहना

आँगन देहरी द्वार हमारे
कोने कोने बसता तम
एक तुम्हारी नेह किरन ने
क्षण में करी कालिमा कम

खण्डित पूजा जैसा जीवन
पावन पूर्ण तुम्हें करना
मन मन्दिर के दीपक तुम
जगमग-जगमग जलते रहना

खण्डहर सा वीरान भवन
लगता था मुझको बोझिल तन
बिन साथी बेचैन फिरा है
बना बावरा, पागल मन

तुम स्वर्णिम आभा वाले
बन गये मीत मोहक गहना
मन मंदिर के दीपक तुम
जगमग–जगमग जलते रहना

सीमा तोड़ आज सयम की
देह प्राण मिल एक हुये
सॉसों गुँथी चुनरी ओढ़ी
कभी कुभाग न हमें छुये

जीवन के इस रीते घट में
प्रेम पियूष प्रिय भरना
मन मंदिर के दीपक तुम
जगमग जगमग जलते रहना



कौन है वो

किसने ये दिन रात बनाये
बहुरंगी मौसम महकाये
साँझ ढले छुपकर अम्बर मे
दीप चाँद के कौन जलाये

कोई है जो मुझको छूकर
आँखों में कुछ सपने बोकर
छुप जाता है क्यों गुलशन मे
फूलों को मोहक रंग देकर

बरसे नयनों से सावन बन
वो ही अधरों पर मुस्काये

पर्वत चूमे घनी घटायें
सागर मथन करें हवायें
पलकों से सूरज को ढककर
स्वपनीली बदरी इतराये

तू ही है जो रूप बदलकर
संसृति की तस्वीर बनायें

विस्मित ये मन कहीं न ठहरा
बुनता रहता जाल सुनहरा
कनक-महल में आती जाती
उष्मित साँसें देती पहरा

सूत्रधार ओझल आँखों से
कठपुतली सा हमें नचाये



अनकही

शब्दहीन भावों का कम्पन
और अनकही बातें हैं
एक अनाम गीत सी लगती
अर्थहीन ये साँसें हैं

खुद को समझ नहीं पाये हम
गैरों से क्या आस करें
बंद किताबें पड़ी वक्त की
खोलें उनकी पीर हरे
भोर किरन खो गयी कहीं अब
सघन अँधेरी रातें हैं

सुधियों तक का शोर नहीं
बस दूर-दूर तक तन्हाई
एकाकी मन में अपनी ही
छुई-मुई सी परछाईं

राग-रंग खो गये कहीं बस
नियति नटी की घातें हैं

कैसी आग लगी मधुबन में
कोने कोने उठे धुँआ
प्रीत बिना जीवन लगता है
जैसे अंधा एक कुआँ
वीरानापन देख उड़ गयी
सुख सुगना की पातें हैं



गंगा की सोच

काशी के घाटों में विचरती
गगा अक्सर सोचा करती
स्याह हुआ कैसे ये अंबर
हुई मरुस्थल क्यों अब धरती

युग युग से बहता जीवन जल
फिर भी कम न हुआ हाला हल
सदियॉ बीती धोते-धोते
मलिन हुई पापों को ढोते

कण-कण में जीवन को बोया
जीवन को अब स्वय तरसती
काशी के घाटों में विचरती
गंगा अक्सर सोचा करती

शम्भू-जटाओं से जब निकली
निर्झर बन हिमगिर से पिघली
लहराकर आँचल निज निर्मल
प्रेम सुधा बरसाकर निश्छल

पथरीले पथ पर चलकर भी
स्वर लहरी साँसों में भरती
काशी के घाटों में विचरती
गंगा अक्सर सोचा करती

कितनी देहों का मैल घुला
फिर भी मानव का मन न धुला
राम अब भी पाते वनवास
सत्य का होता है उपहास

मैं तो होकर भी शैल सुता
खारे-सागर को ही वरती
काशी के घाटों में विचरती
गंगा अक्सर सोचा करती

जब गीता-ज्ञान गया रोपा
जग को सुत भीष्म तभी सौंपा
कृष्णा का कहाँ शखनाद
अब केवल तृष्णा पर विवाद

तुलसी वेद व्यास की रचना
बस घर के आले मे सजती
काशी के घाटों में विचरती
गंगा अक्सर सोचा करती



सुधियों के साये

साँसों की सरिता उफनाये
लहर-लहर सुधियों के साये

जीवन ज्यों जलती दोपहरी
स्नेह-छाँव पल दो पल ठहरी
सारा जीवन राह निहारी
हटे न व्यवधानों के प्रहरी

गीत-गीत उपनाम तुम्हारे
मीत हुलसकर हमने गाये

समय सिंधु उत्ताल तरंगें
रेत-रेत हो गयी उमंगें
छुपी नयन की गहराई में
पीड़ा की अनगिनत सुरंगें

पलकें भीग-भीग जाती हैं
जब जब याद तुम्हारी आये

खलते बहुत विरह अँधियारे
देखें हम बैठ मन मारे
संग चलो दो चार कदम भी
सच हो जायें स्वप्न कुँवारे

बिना तुम्हारे ओ निर्मोही
महका मौसम कैसे भाये
साँसों की सरिता उफनाये
लहर लहर सुधियों के साये



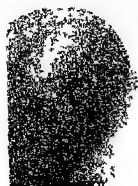
निष्ठुर नियति

सावन की भीगी रातो में
मीत बिना मन अकुलाये
रह रह पुरवा पवन-बावरी
तन-मन मेरा सिहराये

हम तुम दोनों साथ चले थे
करने मौसम की अगवानी
जाने कैसे समय अचानक
कर बैठा अपनी मनमानी

खिल-खिल हँसते सुमन सपन के
पलभर में ही मुर्झाये
सावन की भीगी रातों में
मीत बिना मन अकुलाये

प्रीत पगी ये मेरी आँखें
आज हुई सावन-सावन हैं
समझे कौन पीर प्राणों की
पास नहीं अब मन भावन है



जन्मो जन्म जुडे रिश्तों को
निष्ठुर नियति क्यो झुटलाये
सावन की भीगी रातों में
मीत बिना मन अकुलाये

लहरें उठें उसॉसों की तो
प्राणों मे होता है कम्पन
गहरी होती देख उदासी
आ बैठी यादे घर ऑगन

हौले से छूकर अंतस को
पीड़ा मुझको सहलाये
सावन की भीगी रातों में
मीत बिना मन अकुलाये



नाम तुम्हारा

साँसें मेरी आती जाती
नाम तुम्हारा ही दुहराती
जलती दोपहरी में यादें
छाया बनकर के हैं आती

ज़िन्दगी कुछ देर ठहरे
वक्त पर लग जाये पहरे
सोच की हो उम्र इतनी
सूर्य में हो धूप जितनी

अब अँधेरे रास्तों में
प्रीत की लौ झिलमिलाती
साँसें मेरी आती जाती
नाम तुम्हारा ही दुहराती

चार कदम हम संग-संग चल लें
सपनों का रंग मुख पर मल लें
जीवन की इस मधुशाला में
थोडा सा तो मधुरस चख लें
सुख-दुख की सब राहें मेरी
तुमसे ही आकर जुड़ जातीं



साँझ सुनहरी

शर्माती सकुचाती आयी
देखो साँझ सुनहरी

पग में नूपुर बाँध पवन के
रुनझुन-रुनझुन चलती
आँचल झलमल रंग सपन के
धरा-गगन से मिलती

धीरे-धीरे गजगामिनी सी
बिहसें बावरी उतरी
शर्माती सकुचाती आई
देखो साँझ सुनहरी

चुपके चुंबन लिया चाँद ने
हो गये गाल गुलाबी
ओर-छोर लग रहा नशीला
पूरा समाँ शराबी

अलसाई आखों की आभा
दिशा-दिशा में बिसरी
शर्माती सकुचाती आई
देखो साँझ सुनहरी

हँसे यामिनी बॉह पकड़ के
संध्या बनी सहेली
तारों टँकी चूनरी ओढ़े
लगती निशा नवेली

जुगनू की आतिशबाजी में
अवनि और कुछ निखरी



मनमरुथल

सूने-सूने मन-मरुथल में
सुधि के बादल घिर आये
जैसे कोई सुमन महकता
पतझर में भी खिल आये

बस्ती अलबेली सपनों की
बात न भाती अब अपनों की
चारों ओर दिखावा छल है
देख-देख मन भरमाये

सूने-सूने मन-मरुथल में
सुधि के बादल घिर आये

साँसों की सरिता खारी है
खेल मुखौटों का जारी है
तृप्ति कहाँ होती शबनम से
प्यास सदा ही भरमाये

सूने-सूने मन मरुथल में
सुधि के बादल घिर आये

पाखी जैसा वक्त उडा है
सोच अकेला आज खड़ा है
काश कोई पल दो पल को ही
बीते दिन फिर लौटाये

सूने-सूने मन मरुथल में
सुधि के बादल घिर आये

क्यों बसत पतझार हो गया
महका मौसम कहाँ खो गया
पलक पाँवड़े बिछा प्रतिक्षा
शगुन-सुआ से विचराये

सूने-सूने मन मरुथल में
सुधि के बादल घिर आये



मनाकाश

मनाकाश में घिरते धुँधलके
साँझ के रंग हैं गहरे हल्के

कुछ जाने अनजाने चेहरे
यादों ने फिर चित्र उकेरे
मुखर बना देते बरजोरी
तोड़-तोड़ संयम के पहरे

पुरवाई की छुअन रेशमी
खुल जाती हैं स्वप्निल पलकें

दूर क्षितिज में धूप सिमटती
मुट्ठी भर फिर रात छिटकती
चाँद अधूरा टूटा प्याला
बूँद-बूँद अनुरक्ति टपकती

मन वीणा का लघुस्पदन
बनकर गीत अधरों से छलके

अधजागी–अधसोयी रातें
करे विकल बिन बोली बातें
करवट बदले सोच अकेले
दर्दीली घातों पर घातें

स्वप्न कुआँरा आँसू बनकर
नयन कोर से सहसा छलके
मनाकाश में घिरते धुँधलके
साँझ के रंग हैं गहरे हल्के



प्यार कहाँ

कहने भर को बस प्यार यहाँ
नफरत का ही परवार यहाँ

परवानों की साँसें घुटती
संयम की रेखायें मिटती
अंबर का बौनापन खलता
आशा की किरणें छटती
फिर वक्त करें इसरार यहाँ
नफरत का ही परवार यहाँ

जब उम्मीदें की फूलों की
सौगात मिली तब शूलों की
हम चाह करें क्या खुश्बू की
बैठे जब छाँव बबूलों की
दिल को आये न करार यहाँ
नफरत का ही परवार यहाँ

उलझे–उलझे रिश्ते दिखते
बिन मोल यहा सपने बिकते
खुशियों के मौसम रूठ चले
बीते दिन दुख लिखते लिखते

अब नहीं मान–मनुहार यहॉं
नफरत का ही परदार यहॉं



ज़िदगी के गॉव में

अरे ! जिंदगी तेरे गॉव में
चले धूप में और छॉव में
कई रंगों में मौसम मिले
सुख दुख पले इसी ठॉंव में

पतझड में जब जीवन जले
मधुमास में उपवन खिले
मुँह मोड़कर खुशियाँ गयी
दुख दर्द भी हँसके मिले

कहीं खुशबुयें और फूल हैं
कहीं शूल चुभते पॉव में

बॅधकर किनारों में रही
नदी श्वास की पल-पल बही
बाहों में भर पथरीले पथ
राहों की दुविधा भी सही

कभी मंजिले हर मोड़ पे
कभी मात थी हर दाँव में



दोहे

गगोत्री से ज्ञान की, बहते हैं सुविचार
संगम बुद्धि विवेक का, जीवन पावन धार

स्मृतियों का कुंभ है, मन गंगा के तीर
डुबकी लगा अतीत में, मुक्त हो गयी पीर

सुनी-सुनाई बात के पीछे भागें लोग
अनदेखे सुख के लिये, करे जोग संजोग

साँसों में श्रद्धा बहे, नैनों में प्रभु आस
तन-मन ही तीरथ बने, ईश्वर का यही वास

समय बड़ा बलवान है, सुन इसकी ललकार
पीर पयम्बर भी झुके, इससे माने हार

जनम मरण का चक्र ये, तालबद्ध एक राग
सुर जो गलत मिलाये तो, बनता भाग कुभाग

सूर्य भेद बरते नहीं, धूप घर घर समाय
जात-पाँत सब छोड़के, मनुज धर्म अपनाय

काजल की एक कोठरी, दर्पण दियो लगाय
बंद द्वार अब खोलिये, धूप ज्ञान की आय।

किससे करूँ सनेह मैं, किससे ठानूँ बैर
ईश्वर का सब रूप है, माँगूँ सबकी खैर

सुख के सब साथी बनें, दुख में गहें न हाथ
सूर्य हुआ जब अस्त तो, छाया छोड़े साथ

दोहे

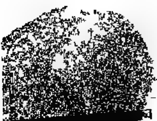
गंगोत्री से ज्ञान की, बहते हैं सुविचार
संगम बुद्धि विवेक का, जीवन पावन धार

स्मृतियों का कुंभ है, मन गंगा के तीर
डुबकी लगा अतीत में, मुक्त हो गयी पीर

सुनी-सुनाई बात के पीछे भागें लोग
अनदेखे सुख के लिये, करे जोग संजोग

साँसों में श्रद्धा बहे, नैनों में प्रभु आस
तन-मन ही तीरथ बने, ईश्वर का यही वास

समय बड़ा बलवान है, सुन इसकी ललकार
पीर पयम्बर भी झुके, इससे माने हार



जनम मरण का चक्र ये, तालबद्ध एक राग
सुर जो गलत मिलाये तो, बनता भाग कुभाग

सूर्य भेद बरते नहीं, धूप घर घर समाय
जात-पाँत सब छोड़के, मनुज धर्म अपनाय

काजल की एक कोठरी, दर्पण दियो लगाय
बंद द्वार अब खोलिये, धूप ज्ञान की आय।

किससे करूँ सनेह मैं, किससे ठानूँ बैर
ईश्वर का सब रूप है, माँगूँ सबकी खैर

सुख के सब साथी बनें, दुख में गहें न हाथ
सूर्य हुआ जब अस्त तो, छाया छोड़े साथ

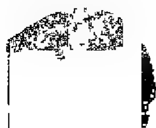
अपने–अपने भाग्य का हर कोई लिक्खा खाय
और और की चाह मे, हाथ लगा भी जाय

नदिया सब नारा बनी, जंगल हुये उजाड़
मानव अपने हाथ से, जीवन रहा बिगाड़

परलय की पदचाप सुन, अब तो मानव जाग,
खायेगा फल किस तरह, जब उजडेगा बाग।

प्यार मुहब्बत दोस्ती, लगे किताबी बात
छलते हैं रिश्ते सभी, झूठे सब जज़्बात

मन पाखी उड़–उड़ चला, क्यों सुधियों के गाँव
जीवन नभ जलता हुआ, मिले न ठंडी छाँव



आया है तो जायेगा, दिवस महीना साल
काल राग बदले नहीं, अपने सुर और ताल

पल-पल जीवन का खिले, जैसे आँगन धूप
मन आशा फूले-फले, ले बगिया का रूप

बढ़े-प्रेम संतुष्टि सुख और ज्ञान-विज्ञान
हो विहान नवसदी का, बजे शांति का गान।

मन में सरसों फूटती, मुस्काये ऋतुराज
नयनों में सपने तैरें, लुकछुप झांके लाज

बौराये अमवा सखि, मन में उठती हूक
होरी सा धू-धू जले, सुन कोयल की कूक

चाँद खिला तो मिल गया, तारों को वनवास
तुम्हें देख दुख ने लिया, चुपके से सन्यास

साँझ भयी तो जल गये, मन में कितने दीप
स्वाती बूंद मुक्ता बने, मिले कहीं जो सीप

सरे आम बाजार में बिकते हैं भगवान
ऊँची बोली बोलता, अब अदना इंसान

आओ बैठो दो घड़ी, कर लें दिल की बात
ऐसे ही कट जायेगी, दर्द भरी ये रात

हम तुम मिलकर बुन रहे, सुख सपनों का जाल
तभी समय चलने लगा, अपनी उल्टी चाल



छोटी बातें छोड़कर, करो बड़े कुछ काम
साँसें जब गहरी हुई, गयी तभी सुखधाम

पनघट पर बैठी तृषा होती बहुत अधीर
तृप्ति देखती दूर से, भरा कलश में नीर

खुले हाथ से बाँट दो, सारे जग को प्यार
बन जाओगे एकदिन तुम सबके गलहार

हरित वसन से छन रही कंचनवर्णी धूप
मनमोहक लगता बहुत धरती का ये रूप

कहाँ–कहाँ राहें गयीं कौन गली किस गाँव
चलते चलते क्या कभी थके न इनके पाँव

सोच सयाना हो गया रोके ठिठके पॉव
अपने ऑगन धूप क्यो, उनके आंगन छॉव

कोई भी प्रण ठान लो, निश्चय होगा पूर्ण
कठिन कर्म से ही सदा, पत्थर होता चूर्ण

सारे सुख आँचल बँधे, फिर भी मन उदास
स्वर्ग भला किस काम का, मनमीत नहीं जब पास

खेल खेल में हो गये, हम तो मन के मीत
गुण-अवगुण देखे बिना जुड़ जाती है प्रीत

एक बार मन से जुड़े, जाता कभी न दूर
क्या जाने कब क्या करे, समय बड़ा ही क्रूर

चलते चलते दिन ढला, मजिल अब भी दूर
थके-थके पॉव पर चलने को मजबूर

मृत्यु के दर पे खड़ा, जीवन हाथ पसार
साँसे जितनी हैं मिली, पहले उनको तो सँवार

चलो बंधु उस राह पर, जो मंजिल तक जाय
भरत जाल में उलझ के कुछ कोई नहि पाय

सागर है संसार यह सब उबे उतराँय
लोभ-मोह की लहर से विरले ही बच पायँ

तृप्ति देर तक नहीं रुके, तृषा करे मनुहार
जनम-जनम से हो रही दोनों मे तकरार

भरी-भरी आँखें खलें बहे नीर बन पीर
मन पर लगती ठेस है होते प्राण अधीर

तेज धूप हर ओर है कहीं न तिल भर छाँव
व्याकुल हो हम सोचते, किधर बढ़ावें पाँव?





धर्म

धर्म तो है
मन की आस्था
राम
या रहमान नहीं।
मार्ग है
मोक्ष का
केवल गीता
या कुअरान नहीं।
धरती पर धर्म है
नैतिकता का आवरण
करती है
हर आत्मा
जिसका वरण।
धर्म
सत्कर्म का
है आचरण।

रक्षा करे
जनमानस
समाज की
विसंगति मिटे
आज की।
न हो जहाँ
न्याय का हरण
सत्यम
शिवम् की गोद में
हो मानवता का पोषण
भरण।
धर्म है
सन्मार्ग का आईना
अधर्म की जिसे
छाया तक
छू पाई ना।
सच्चा धर्म
है वो नारा
जिसका करे अनुसरण
जग सारा।
इंसान का इंसान से
हो भाई चारा।

हों भले ही
रास्ते सबके
अलग-अलग
मंजिल
तो सबकी
एक है
शम्में कितनी भी
जलें
महफिल तो उसकी
एक है!



गंगोत्री से ज्ञान की,
बहते हैं सुविचार।
संगम बुद्धि विवेक का,
जीवन पावन धार।

* * *

स्मृतियों का कुंभ है,
मन गंगा के तीर
डुबकी लगा अतीत में,
मुक्त हो गयी पीर

* * *

बूढ़े गगन का सूनापन
अंधे कुयें सा मेरा मन
भरा-भरा रहता है फिर भी
खाली लगता ये बर्तन





ग़ज़ल
एवं
नज़्म



उभरे हैं कागज़ पे दिल की धड़कनों के नक्शे पा
शेर क्या है, जिह्न की आवारगी के कुछ निशाँ

* * *

लिक्खें भी तो क्या लिखें इस दौर की हम दास्ताँ
हो कलम डूबा लहू में, शब्द हो घायल जहाँ

* * *

आरती के साथ गाकर आयतें कुअरान की
ढाल दें इकजहती के साँचे में अब हिन्दोस्ताँ

* * *

अब बिछुड़कर भी हमें दूरियाँ खलती नहीं
फूल और खुश्बू का रिश्ता है तो अपने दरमियाँ



ए ख़ुदा दे वो नज़र जो पढ़ सके ख़ामोशियाँ
गुनगुनाती रहती हैं क्या गुल से मिल के तितलियाँ

अनकहे अहसास की कुछ सुन सकूँ मैं सिसकियाँ
मेरी पलकों पे थमे बादल करें सरगोशियाँ[1]

घुल रही है तेरी चाहत की हवाओं में महक
फूल खुशबू चाँदनी क्या है तेरी परछाइयाँ

कुछ फ़साने लिख रही है बारिशें इस रेत पे
सौंधी सौंधी सी महक पाने लगी पुरवाइयाँ

मैं करूँ दीवार से बातें तो सब मुझपे हँसे
कौन मानेगा इन्हें ये हैं मेरी परछाइयाँ

1- कानाफूसी, फुसफुसाहट

भीड़ यादों की लगी तो घर की वीरानी बढ़ी
क्या तमाशा बन गयी है अब मेरी तन्हाइयाँ

चलिये ख़्वाबों में सही उनसे मिलन तो हो गया
आँख खुलने पर मुझे बजती मिली शहनाइयाँ





ले गयी कुछ इतना ऊँचा सोच की गहराइयाँ
हर तरफ बिखरी हुई थी नूर की रानाइयाँ[1]

अब अगर हम डूब भी जायें तो शिकवा क्या करें
सो गये जब वक्त के हाथों में देकर कश्तियाँ

बख्शी हैं तकदीर ने मुश्किल से ये तन्हाइयाँ
बेज़ुबाँ अहसास की आ तोड़ दे खामोशियाँ

चाँद सूरज और तारे सब तेरे दामन में हैं
आसमाँ फिर क्यों तेरी किस्मत में है तन्हाइयाँ

धूप में रहते हुये भी कोई मुरझाई नहीं
ख़ाक की ओढ़े हुये चादर मिली परछाइयाँ

1- सुन्दरता

भीड़ यादों की लगी तो घर की वीरानी बढ़ी
क्या तमाशा बन गयी है अब मेरी तन्हाइयॉ

चलिये ख़्वाबों में सही उनसे मिलन तो हो गया
ऑख खुलने पर मुझे बजती मिली शहनाइयाँ





ले गयी कुछ इतना ऊँचा सोच की गहराइयाँ
हर तरफ बिखरी हुई थी नूर की रानाइयाँ[1]

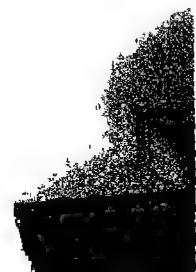
अब अगर हम डूब भी जायें तो शिकवा क्या करें
सो गये जब वक्त के हाथों में देकर कश्तियाँ

बख्शी हैं तकदीर ने मुश्किल से ये तन्हाइयाँ
बेज़ुबाँ अहसास की आ तोड़ दे खामोशियाँ

चाँद सूरज और तारे सब तेरे दामन में हैं
आसमाँ फिर क्यों तेरी किस्मत में है तन्हाइयाँ

धूप में रहते हुये भी कोई मुरझाई नहीं
ख़ाक की ओढ़े हुये चादर मिली परछाइयाँ

1- सुन्दरता



अपने ख़्वाबों के हंसी फूलों को चुनकर लायी हूँ
आ मैं पलकों में सजा दूँ नींद की सरशारियाँ[1]

उस घड़ी का था करम जिसने जुदा हमको किया
दो दिलों में दूर रहकर बढ़ गयी नजदीकियाँ



1- पूर्णता



जहाँ न होगी जमीं और न आसमाँ होगा
वहीं कहीं तो क्षितिज में मेरा मकां होगा

विसालो हिज्र के शिकवे गिले न होंगे कभी
अगर न कोई तेरे-मेरे दरम्याँ होगा

न होगी ख़्वाबों की छत और ज़मी हकीकत की
ग़म औ खुशी से परे मेरा आशियाँ होगा

रखे हैं मुझपे नज़र हर घड़ी ये बूढ़ा फ़लक
यही हयात के पल-पल का राज़दाँ होगा

अजीब लोग हैं पढ़ते हैं हाथ की रेखा
जो है नसीब में मेरे वो क्या अयाँ होगा

बफ़ा के फूल खिजाँ में भी मुस्कुरायें 'किरण'
हमारे ख़्वाबों का ऐसा चमन कहाँ होगा



ज़िन्दगी लम्हा लम्हा पिघलती रही
आग जाने ये कब से सुलगती रही

मुतमईन[1] कोई सूरत न कर पायी क्या
ज़िन्दगी तू जो चेहरे बदलती रही

रोकने से रुकी कब समय की नदी
रेत मुट्ठी से सबकी सरकती रही

जम गया था जो लावा सा अहसास का
उम्र भर आँख से लौ निकलती रही

मेरी आँखों में थी इतनी तारीकियाँ[2]
रौशनी आयी भी तो भटकती रही

1- सतुष्ट
2- अंधेरे



कद से बढ़ती रहीं रोज़ परछाँईयाँ
रोज चादर बदन की सिमटती रही

कौन गुजरा ख़्यालों की अंगनाई से
रात-दिन रात-रानी महकती रही



सर झुका देते हैं जब हम वक्त के इसरार पर
क्या गुज़रती है न पूछो इस दिले-खुद्दार पर

उड़ गया काफूर सा हाथों में रुक पाया नहीं
वस नहीं चलता किसी का वक्त की रफ्तार पर

वो घटायें तो बरसकर जाने कब की जा चुकीं
दस्तखत मौजूद हैं अब भी हर इक दीवार पर

पाप की और पुण्य की जब बहस छेड़ी अक़्ल ने
दिल उलझता ही गया सच-झूठ की तकरार पर

सर झुकाना ही पड़ेगा छोड़कर अपनी अना
नाम सबका ही लिखा है काल की तलवार पर





यह खेल सदियों से हो रहा है
कि नाखुदा ही डुबो रहा है

वो मेरे ग़म में जो रो रहा है
गुनाहों के दाग धो रहा है

उम्मीदें थीं ज़िंदगी की उससे
वो ज़हर के बीज बो रहा है

है कैसे सुख की तलाश-ए-दिल
सुकून जो है वो भी खो रहा है

हर आदमी वक्त के कफ़न में
खुद अपनी ही लाश ढो रहा है

अभी तराशा नहीं किसी ने
हूँ बुत जो पत्थर में सो रहा है

ये तूने क्या कह दिया है दिल से
न हँस रहा है न रो रहा है



उम्र भर हम हादिसों की धूप में जलते रहे
तूने जिन साँचों में ढाला, ज़िंदगी ढलते रहे

फ़ास्ले भी दरम्याँ के कम न कर पाये कभी,
दो किनारों की तरह, हम साथ भी चलते रहे

इस तरह से भी चमन लुट जायेगा, सोचा न था
ले उड़ी खुशबू हवायें हाथ गुल मलते रहे

तेरे वादों के सहारे ज़िंदगी कटती रही
आ गया ख़्वाबों में जब चलना तो फिर चलते रहे

दिल बहल पाया नहीं हमने जतन क्या क्या किये
बस बदलकर आइने, अपने ही को छलते रहे

धूप मुट्ठी भर हक़ीकत की न मिल पायी जिन्हें
ऑंखों की गीली ज़मीं पर वो शज़र[1] फलते रहे

खामुशी से मिट गयी खुद को मिटाकर रेत में
बस किनारे ही नदी के फूलते फलते रहे

छाँव हो या धूप कुछ भी ख़ामुशी से सह गये
और सारे तजरुबे अश्आर में ढलते रहे

चाहते हैं हम मिटाना इन अंधेरों का वजूद
बस इसी कारण चिरागों की तरह जलते रहे



1- वृक्ष, पेड़

ग़म नहीं, ग़म के सिलसिले हैं बहुत
ज़िन्दगी के भी हौसले हैं बहुत

जो किसी को नज़र नहीं आता
हर तरफ उसके तज़्किरे[1] हैं बहुत

लोग रिश्तों की डोर थामे हुये
साथ हैं फिर भी, फ़ासले हैं बहुत

उनके चेहरे पे आँख क्या ठहरे
रौशनी एक, दायरे हैं बहुत

प्यार की जिन्दगी का क्या कहना
यूँ तो जीने के रास्ते हैं बहुत

अश्कों से कर ली दोस्ती हमने
जब ये जाना कि हादसे हैं बहुत

उसकी ख़ामोशियों का क्या हो जवाब
चुप ही रहने के फ़ायदे हैं बहुत

जानती हूँ बफा-जफ़ा सब कुछ
मुझको रिश्तों के तज़ुरबे हैं बहुत

जितने मजहब हैं सब उसी के हैं
एक मंजिल है, रास्ते हैं बहुत



उसका हर दुख हर इक ख़ुशी उसकी
मैंने तो जी है ज़िन्दगी उसकी

सोने का हो दिया कि मिट्टी का
है अहम् सिर्फ़ रौशनी उसकी

चाँद इतना बुझा, बुझा क्यों है
छीन ली किसने चाँदनी उसकी

उसकी आँखें तो बोलती थीं मगर
कोई समझा न ख़ामुशी उसकी

तय हुआ साँसों का सफ़र यूँ भी
साथ चलती रही कमी उसकी

खुद से मिलने को भी तरसते रहे
रास आयी न दोस्ती उसकी

उम्र भर का किया है यूँ सौदा
साँसें मेरी हैं ज़िंदगी उसकी



बन्द पड़ी थी घड़ियाँ सारी फिर भी दिन ढलता ही रहा
चाहा लाख समय को बाँधूँ, बन्जारा चलता ही रहा

उम्मीदों के साये साये, जाने कैसी लौ थी हृदय वह
आये गये कितने ही मौसम, दिल का दिया जलता ही रहा

जीवन भर संघर्ष किया तब, एक हकीकत सामने आयी
सच्चा साथी है तो दुख है, सुख तो सदा छलता ही रहा

तुमसे बिछड़कर मैंने झेले अन्जाने कितने ही पल
नींदें हुई आँखों की सौतन, ख्वाब मगर पलता ही रहा

दोनों इक दूजे की जानिब चले थे पर मिल न सके
लगता है जैसे साथ हमारे रस्ता भी चलता ही रहा

बिछुड़ने वाले पल दो पल में जन्मों जन्मों बिछड गये
और मिलन की बेला का ल हा सदियों तक टलता ही रहा

नन्हें पौधे भी जीवन की धूप में मुरझा जाते हैं
मेरे आँगन का इक बूढ़ा पेड़ मगर फलता ही रहा





दर्द के पौधे आखिर कब तक हम सीने में रोपेंगे
उलझेंगे अपने ही दामन, फस्लें जब हम काटेंगे

अफ़साना हूँ उस लम्हे का पीड़ा जिसमें जन्मी थी
सदियों-सदियों सारे पत्थर नाम मुझ ही से जोड़ेंगे

रह जायेगी फिर से कुंवारी खुशबुयें इन साँसों की
मौसम भी तो आखिर कब तक बाट तुम्हारी जोहेंगे

उम्मीदों के गारे से की बंद दरारें कश्ती की
माझी टूटी पतवारें लें तूफानों से जुझेंगे

हमसे ही पूछेंगी सदियाँ रस्ता अपनी मंजिल का
मुस्तकबिल[1] में कोई न भटके नक्शे कदम वो छोड़ेंगे



दरवाजों पर थम सी गयी है, रौशनी की राहें आकर
अब इन बन्द दयारों में हम फिर से अँधेरे ओढ़ेंगे

जन्मों तक महके ये मिट्टी, अब के इतना भीगे मन
सावन फिर घिर आयेगा, ये बादल कभी न लौटेंगे





धूप में और छाँव में दिखता है कैसा आसमाँ
पढ़ सको तो पढ़ लो ख़ामोश आँखों का बयाँ

उभरे हैं कागज़ पे दिल की धड़कनों के नक्शे पा
शेर क्या हैं ज़िहन की आवारगी के कुछ निशाँ

दस्तकें देता रहा जो दिल पे मेरे उम्रभर
सामने आता नहीं वो है तो है आखिर कहाँ

हम नहीं सह पाये जब तन्हाइयों की धूप तो
आ गयीं यादों की चादर लेके कुछ परछाँइयाँ

धूप की जलती सड़क पर तन्हा सूरज ही चला
चाँद के हमराह था, तारों का लंबा कारवाँ

भागता रहता है हरदम वक्त क्यों रुकता नहीं
रोककर पूछे तो कोई उसकी मंजिल है कहाँ

आरती के साथ गाकर आयतें कुअरान की
ढाल दें इकज़हती के साँचे में अब हिन्दोस्ताँ

अब बिछुड़कर भी हमें दूरियाँ खलती नहीं
फूल और खुशबू का रिश्ता है अपने दरमियाँ



दिनभर धूप बटोरी तन में, सूरज भर लिया ऑखों में
फिर भी ॲधेरे कम न हुये, बस आग है रौशन साँसों में

अब तो लौटना भी मुश्किल है, मंजिल तो है दूर की बात
हमको कहाँ ले आये हो तुम, यूँ ही बातों-बातों में

जाने किस बुत में मिल जाये, हमको पिछली पहचानें
खुद को ढूँढ़ा करते हैं हम, यादों के तहखानों में

सदियों की लू गर्त में लिपटा, ताजमहल सा लगता है
यादों की जब धूप छिटकती, शबनम झरती रातों में

जिक्र तेरा आ ही जाता है अन्जाने हर नग्मे में
खुशबू कैसे छुप सकती है ख्वाबों और ख्यालों में



अब रगों में लहू कुछ बचा भी नहीं
और जीने का अब हौसला भी नहीं

हैं ज़िहालत[1] के ज़ेहनों में पर्दे पड़े
रौशनी से कोई फायदा भी नहीं

मौत के द्वार पर भीख है माँगती
ज़िदगी तुझमें इतनी अना[2] भी नहीं

दोस्तो से गिला हम करें भी तो क्या
अब लहू में किसी के बफा भी नहीं

आँधियाँ थीं खड़ी रौशनी लूटने
रातभर इक दिया सो सका भी नहीं

1- असभ्यता, अशिक्षा

2- खुद्दारी



हम भी हक छीन लेने को मजबूर थे
मॉगने से कोई हक मिला भी नहीं

मेरे आमाल[1] क्यों हैं मेरे सामने
हश्र[2] का दिन नहीं, आईना भी नहीं

अपने अन्दर जो ढूढ़ा तो पाया उसे
मंदिरों-मस्जिदों में वो मिला भी नहीं



1- कर्म

2- कियामत, महाप्रलय

छाँव में बैठकर धूप सेंका किये
यूँ वो बर्बादियाँ मेरी देखा किये

झाँझरें चुप हैं खामोश हैं चूड़ियाँ
पनघटों पर हैं सन्नाटे डेरा किये

क्या ख़मोशी से थी दुश्मनी आपको
ठहरे पानी में कंकड़ जो फेंका किये

नीम के पेड़ से आये चन्दन की बू
नाग सन्देह के दिल में रेंगा किये

ज़िन्दगी है जुआ हारना-जीतना
खेल किस्मत का था, लोग खेला किये



थी हमारी नजर मंजिलों पर टिकी
हम कहाँ पाँव के छाले देखा किये

अपने बारे में जिसने न कुछ भी कहा
देर तक उसके बारे में सोचा किये



अपने दामन को मुझसे बचाती रही
हर खुशी दूर से मुस्कुराती रही

बीज तो रौशनी के थे बोये मगर
तीरगी[1] अपने फस्लें उगाती रही

धूप के डर से चलते रहे रातभर
चाँदनी भी तो तलवे जलाती रही

शक्ल वो जिनपे थी, आइनों की नज़र
गर्दिशे वक्त[2] की ज़द[3] पे आती रही

पीले पन्नों में यादों के जो था लिखा
नाम वो मैं सभी से छुपाती रही

कारवाँ जो चला उसको रुकना भी था
मौत क्यों जिंदगी को डराती रही



1- अंधेरे
2- काल चक्र, समय का फेर
3- चोट, निशान, मार



कोई उनको मेरी खबर कर दे
है जो उलझन इधर, उधर कर दे

वो मुझे भूलने की फिक्र में है
हर दुआ उसकी बेअसर कर दे

रातभर जो भटकते रहते हैं
चाँद को उनका राहवर[1] कर दे

वो जिसे चाहे सुर्खरू[2] कर दे
उसकी मर्जी को दर बदर कर दे

जिनको पीकर के जी रही हूँ मैं
उन ही अश्कों को अब जहर कर दे

1- पथ प्रदर्शक

2- संपन्न

मंजिलों तक तो मैं पहुँच न सकी
मंजिलों को मेरी खबर कर दे

सो ही पाऊँ न जागते ही बने
खत्म अब सोच का सफर कर दे

मुंतजिर[1] हूँ मैं एक झोंके की
अपने आने की तू खबर कर दे

रोज मेहमाँ कहाँ वो होते हैं
आज की रात-रातभर कर दे
चंद लम्हे तो मुस्कुरा ही लूँ
जिंदगी चाहे मुख्तसर[2] कर दे



1- प्रतीक्षित
2- छोटा, कम



आपसे इतनी वफ़ा हम जाने क्यों करने लगे
फ़ास्ले खुद से हमारे और भी बढ़ने लगे

शुक्र है आँसू हमारे हमसे रहते हैं ख़फ़ा
आपके सपने हमारी आँखों में बसने लगे

दर्द के आलम में भी अब तो सुकूं मिलने लगा
प्रीत की बंजर ज़मीं पर फूल फिर उगने लगे

अब न लग जाये कहीं हमको हमारी ही नजर
बात दिल की हम जुबाँ पर लाने से डरने लगे

आपकी चश्मे इनायत[1] ने सराहा जो हमें
आइनों को हम भी अब कितने हँसी लगने लगे

1- मेहरबानी

हर हक़ीक़त ज़िंदगी की लग रही कितनी हंसीं
सो गये वहमों-गुमाँ[1] हम नींद से जगने लगे

नाखुदा बन कश्तियों को खे रही है अब हवा
खुश-नसीबी से हमारी दोस्त भी जलने लगे





1- भ्रम, शंका

गर ख़फ़ा उसकी नज़र होती नहीं
ज़िदगी यूँ दर बदर होती नहीं

सिर्फ़ खुश्बू में बसर होती नहीं
ज़िदगी सुख का सफर होती नहीं

सुन रहे हैं वो जमीं पर आयेगा
हर ख़बर तो मोतबर[1] होती नहीं

जब मैं रहती हूँ तुम्हारे ध्यान में
मुझको फिर अपनी ख़बर होती नहीं

1- विश्वस्त, पक्की

तुम मिले तो दिन ठहरते ही नहीं
रात भी तो रातभर होती नहीं

लेके उड़ जाती है ख़ुशबू को हवा
और फूलो को ख़बर होती नहीं

चलते चलते थक गयी अब जिंदगी
पर सजा ये मुख़्तसर[1] होती नहीं

जो पसे[2] आईना खुद को देख ले
ऐसी तो कोई नज़र होती नहीं



- छोटी
- आइने के पीछे



हम कभी जो हँसते हैं, हम कभी जो रोते हैं
हम ही अपने अदर खुद मौसमों को बोते हैं

मैं जलाती हूँ जब भी गुजरे लम्हों की शम्में
दूर मुझसे रहकर भी वो करीब होते हैं

नामों के मुखौटों से क्यों छुपाते हैं चेहरा
अपनी–अपनी पहचानें लोग खुद ही खोते हैं

ढेर झड़ते पत्तों का क्यों लगायें आँगन में
क्यों हसीन माज़ी[1] के ख़्वाबों को सँजोते हैं

रात कितने ख़्वाबों को पलकों से कुचल डाला
जाने और अनजाने पाप कितने ढोते हैं

1- अतीत

तुम मिले तो दिन ठहरते ही नहीं
रात भी तो रातभर होती नहीं

लेके उड़ जाती है ख़ुशबू को हवा
और फूलो को ख़बर होती नहीं

चलते चलते थक गयी अब जिंदगी
पर सजा ये मुख़्तसर[1] होती नहीं

जो पसे[2] आईना खुद को देख ले
ऐसी तो कोई नज़र होती नहीं



- छोटी
- आइने के पीछे



हम कभी जो हॅसते हैं, हम कभी जो रोते हैं
हम ही अपने अदर खुद मौसमों को बोते हैं

मैं जलाती हूॅ जब भी गुजरे लम्हों की शम्में
दूर मुझसे रहकर भी वो करीब होते हैं

नामों के मुखौटों से क्यों छुपाते हैं चेहरा
अपनी–अपनी पहचानें लोग खुद ही खोते हैं

ढेर झडते पत्तों का क्यों लगायें ऑगन में
क्यों हसीन माजी[1] के ख्वाबों को सॅजोते हैं

रात कितने ख्वाबों को पलकों से कुचल डाला
जाने और अनजाने पाप कितने ढोते हैं

1- अतीत

साज़े दिल के तारों को तूने छू लिया जब से
तेरी खुशबू से अपने गीतों को भिगोते हैं

जो बयान करते हैं पाप-पुण्य की तफ़सीरें[1]
याद रखे उनसे भी कुछ गुनाह होते हैं।



1- व्याख्यान

अफसानों में हम भी ढलेंगे वक्त हमारा आये तो
आग का दरिया वह निकलेगा, कोई जुनूँ सुलगाये तो

होते होंगे कांटों के भी दामन कितने खून से तर
गले लगाकर कोई उनके ज़ख्मों को सहलाये तो

हैं कितने ख़ामोश तरन्नुम पत्थर के भी सीने में
देखना फिर संगीत का जादू दर्यादिल कोई गाये तो

तारे सब दामन से होंगे मुट्ठी में फिर होगा चाँद
बस इतनी सी शर्त हमारी अर्श ज़मी पर आये तो

ठहर गये हैं कितने सागर बहते-बहते पलकों पे
फिर से कुरेदो ज़ख़्म पुराने आग अगर दब जाये तो

चेहरों की इस भीड़ में हमको अपनी ही पहचान कहाँ
अपनी हकीकत हम भी जानें आईना कोई लाये तो

करने को इज़हारे मुहब्बत लफ़्ज औ सदा का काम नहीं
ख़ामुशी भी एक ज़ुबां है कोई अगर पढ़ पाये तो

इंसानों में दूरी तो मिट सकती है मिट जायेगी
नफरत की दीवार गिराने कोई मसीहा आये तो





तुम मिले तो

बुझते चिरागों को किसी
आँचल का साया मिल गया
अहसास पीला चाँद था,
तिरी रौशनी में खिल गया

ये जिस्मों जॉ सब है परे
बस सॉसों की इक डोर है
चुप चुप सी है सारी फिज़ाँ
बस धड़कनों का शोर है

अहसास कुछ कहने को है
पर होंठ कोई सिल गया

रूठी हुई खुशियों ने फिर
झुककर हमें सजदा कि
ग़म मुँह छुपाकर चल दिये
हर दर्द ने परदा किया

सब फ़ास्ले मिटने लगे
पता मंजिलों का मिल गया

इन स्याह रातों में मेरी
जो धूप बनके खिल रही
उम्मीदें थीं जो अर्श पे
बनके दुआयें मिल रही

तुम मिल गये तो यूं लगा
जैसे खुदा ही मिल गया



छलका है खूब साग़रे महताब[1] से सरूर
लगता है रात बज़्म[2] सजी थी कहीं ज़रूर

है चाँदनी को कितना शबेमाह[3] का गुरूर
ऐसे में बेनकाब चले आइये हुजूर

भूले हैं सब ख़ुदा को खुदी में हैं चूर-चूर
इन लोगों में न ढूढ़िये, अख़्लाक और शऊर[4]

आइना देखिये न कहीं खो गया हो कुछ
बहकी है चाँदनी तो फ़ज़ा है नशे में चूर

कितना कठिन सफर है मुहब्बत का ये सफर
चलना भी साथ-साथ है रहना भी दूर-दूर



1- चाँद का पैमाना
2- महफिल
3- पूर्णमासी
4- सभ्यता, अदब

शायर का दिल

शायर का दिल पत्थर कर दे
या हर दिल खुशियों से भर दे

हर चेहरे पर दर्द का पहरा
पलकों पर एक सावन ठहरा
सहमे सहमे से ख़्वाबों में
उम्मीदों का रंग सुनहरा

उलझी-उलझी इन रातों को
महकी-महकी एक सहर दे

चलती फिरती सी कुछ लाशें
सड़कों पर दम तोड़ती साँसें
जीने मरने की बाज़ी में
वक्त ने फेंके अपने पाँसे

चुभता है जीवन काटों सा
मत साँसों का ये नश्तर दे

हर सूं है बस मौत का मंजर
दुख-सुख का लावा है अदर
मन तो है दर्पण सहरा का
ऑखें खारा एक समुन्दर

अब अहसास की गीली मिट्टी
धूप दिखाकर पत्थर कर दे



कोई हम पर रहम की अब क्यों नजर होती नहीं
ज़िन्दगी खाली दुआओं में बसर होती नहीं

बेज़बा-बेजान से सब हो गये दीवारो-दर
शहर में हो जाये कुछ भी अब ख़बर होती नहीं

डस लिया सूरज को नफ़रत के कुहासों ने यहाँ
कितनी भी शम्में जला लो अब सहर होती नहीं

मंजिलें मिल जायेंगी कुछ हौसला भी चाहिए
जो न तै की जा सके ऐसी डगर होती नहीं

जानते हैं यूँ तो सब मेरी उदासी का सबब
जिसको होना चाहिए, उसको खबर होती नहीं



कोई कितने ही दिये रौशन यहाँ करता रहे
अंधी-बस्ती में मगर कद्रे-हुनर होती नहीं

बिन चले ही मंजिलें पाने की ख्वाइश क्यों करें
रहगुज़र कोई भी हो तय बेसफर होती नहीं



ज़िन्दगी तो खुदा की नेअमत है
फिर भी इन्सान को शिकायत है

ग़म अता हो तो है करम उसका
और खुशी तो बड़ी इनायत है

क्यूं रखूँ उससे मैं कोई उम्मीद्
ये मुहब्बत नहीं तिजारत[1] है

अपना होके भी हमको धोखा दे
दिल की कैसी खराब आदत है

आँखें-आँखें से बात करती रहें
चेहरा पढ़ने की क्या जरूरत हैं।

1- सौदा



अपनी तन्हाइ से मैं हार गयी
अब मुझे आपकी जरूरत है

ग़ैर के सपने बुनती हैं आँखें
अपनी है अपनो से बगावत है

उसके ही द्वार पर उसे बेचे
बन्दगी है कि ये तिजारत है

अपनी तहज़ीब याद है हमको
यही इस दौर में गनीमत है



धूप भी इन दिनों सर्द लगती मुझे
रूप की चाँदनी गर्द लगती मुझे

ऑसुओं ने लिखी प्रीत की दास्ताँ
ज़िंदगी नग्म-ए-दर्द लगती मुझे

प्यार का कोई ऐसा भी मौसम है क्या
रौशनी चाँद की ज़र्द लगती मुझे

बाँध सकता भला हुस्न को कोई क्या
ये ज़मीं बस तेरा कर्द[1] लगती मुझे

इक नजर ने नजर से गिरा क्या दिया
हर नजर की किरण अर्द[2] लगती मुझे



1- कर्म कृति
2- नाराज



हमने तन्हाई तो चाही ऐसी तन्हाई नहीं
एक युग बीता तुम्हारी याद भी आई नहीं

गैर की खातिर तो अक्सर मुस्कराये हैं अधर
सच ये है मुझको खुशी कोई भी रास आयी नहीं

रहते हैं कितने अकेले तंग दिल होते हैं जो
जो कुशादा[1] दिल हैं उनको रंजे तन्हाई[2] नहीं

दूसरों पर ही उठाते रहते हो क्यों उंगलियाँ
तुमने क्या अपने में कोई भी कमी पायी नहीं

रंजिशें दिल में रहे तो चैन आता है किसे
हम भी जागे रातभर, उनको भी नींद आयी नहीं



1- विशाल हृदय
2- तन्हाई का दुख

धूप भी इन दिनों सर्द लगती मुझे
रूप की चाँदनी गर्द लगती मुझे

आँसुओं ने लिखी प्रीत की दास्ताँ
ज़िंदगी नग्म-ए-दर्द लगती मुझे

प्यार का कोई ऐसा भी मौसम है क्या
रौशनी चाँद की ज़र्द लगती मुझे

बाँध सकता भला हुस्न को कोई क्या
ये ज़मीं बस तेरा कर्द[1] लगती मुझे

इक नजर ने नजर से गिरा क्या दिया
हर नजर की किरण अर्द[2] लगती मुझे



1- कर्म कृति
2- नाराज

हमने तन्हाई तो चाही ऐसी तन्हाई नहीं
एक युग बीता तुम्हारी याद भी आई नहीं

गैर की खतिर तो अक्सर मुस्कराये हैं अधर
सच ये है मुझको खुशी कोई भी रास आयी नहीं

रहते हैं कितने अकेले तंग दिल होते हैं जो
जो कुशादा[1] दिल हैं उनको रंजे तन्हाई[2] नहीं

दूसरों पर ही उठाते रहते हो क्यों उंगलियाँ
तुमने क्या अपने में कोई भी कमी पायी नहीं

रंजिशे दिल में रहे तो चैन आता है किसे
हम भी जागे रातभर, उनको भी नींद आयी नहीं



1- विशाल हृदय
2- तन्हाई का दुख

बाद तेरे ये दुनिया सुहाती नहीं
आरज़ू कोई भी सर उठाती नहीं

जबसे तू है नज़र में समाया हुआ
काबा औ काशी की बात भाती नहीं

मौसमों को खुदा जाने क्या हो गया
अब घटा उनके वादों की छाती नहीं

मेरी साँसों में तू उसकी साँसों में तू
ए हवा! क्यों खबर उनकी लाती नहीं

ख़ुद को दुश्मन की आँखों में देखूँ कभी
आइने में तो सच्चाई आती नहीं



वापिसी उसकी तय थी मगर जाने क्यों
अब नजर कोई उम्मीद आती नहीं

मॉग भरकर मुझे कैद तो कर दिया
तुमको जंजीर दुनिया पिन्हाती नहीं



फ़िक्र

ये बदबुदाती हुई खामोशियाँ
बढ़ा रही फ़िक्र की सरगोशियाँ
भीड़ सी बढ़ गयी सहसा सूनसान में
रूह रहती है जहाँ उस मकान में
उमस बढ़ती जा रही है मन के तयखानों में
साँसें लौट आती हैं डरती हैं अंदर जाने में
फ़िक्रे सुखन[1] की मुट्ठियाँ कस रही हैं इन दिनों
माथे पे उनके शिकन बढ़ रही है इन दिनों
फ़िक्र करने लगी है सचझूठ की तश्सीरें[2]
पाप पुण्य के चक्रब्यूह रच रहे, कुरूक्षेत्र की तस्वीरें
चटकता हुआ आइना कितना पशेमान[3] है
अपनी ख़ामोशियों से किस कदर परेशान है
काश ये चुप चीखों में बदल जाये
सदाओं का थमा सैलाब घर से निकल जाये



1- काव्य रचना की तन्मयता/चिंता, सोच
2- व्याख्यान
3- लज्जित, शर्मिंदा



हमारे दरम्याँ

कल रात फिर रौशनी का एक टुकड़ा
छिटककर चाँदनी से गिर आया हमारे दरम्याँ!
कुछ हताश कुछ बदहवास
भटक रहा था स्याह रातों में,
हताश नहीं जोड़ पाया
टूटते अँधेरों का सिलसिला!
बदहवास नहीं खोज पाया
उलझती ख़ामोशियों का सिरा।
कहाँ तक रौशन करता अँधेरों को
कोने-कोने बस गये थे जो हमारे दरम्याँ।
कैसे बटोरता उन शब्दों को
जो बिखर गये थे बरसों से,
वो अहसास वो जज़्बात फ़ना हो गये
जो कभी ज़िन्दा थे।
हमारे ख़्वाब सो गये
हक़ीकतों की हलचल में
जो साथ-साथ जागते थे हमारे दरम्याँ!
लौट जा रौशनी तेरा एहतिराम भी न हुआ
अब तो चिराग भी आदी है
इन्हीं अंधेरों के हमारे दरम्याँ



बेख़्याली का है मौसम बेखुदी की है हवा
गीत तो रूठा ही था मुझसे ग़ज़ल भी है ख़फ़ा

कहने सुनने को मेरी हस्ती थी नन्ही सी दिया
आँधियाँ खुद बुझ गयी देखा जो मेरा हौसला

एक अन्देखे सफ़र की सक्ल[1] हम चल तो दिये
कोई मंज़िल है नज़र में और न कोई रास्ता

हाथ लग पाती नहीं लफ़्ज़ों की रंगी तितलियाँ
बेज़ुबां अहसास को दे भी तो दे कैसे सदा

मेरी पलकों के दरीचों पर ये दस्तक किसने दी
और होगा कौन आवारा ख्वाबों के सिवा

1- दिशा



राहे-हस्ती[1] में समेटे ख़ुद को हम चल तो दिये
अपने ही वहमों-गुमाँ[2] रोके हुये हैं रास्ता

फ़ास्ला रहता है जितना मौसमों के दरम्याँ
है ख़ुशी के और ग़म के बीच उतना फ़ास्ला



1- जीवन यात्रा

2- डर, शका, सदेह, भ्रम

लिक्खें भी तो क्या लिखें इस दौर की हम दास्ताँ
हो कलम डूबा लहू में शब्द हों घायल जहाँ

टुकड़ों-टुकड़ों बट गया इंसान जैसे इन दिनों
लग रहा है एक, रहते नहीं हैं जिस्मों जाँ

क्या ख़बर थी आयेगी तन्हाइयाँ भी साथ-साथ
हमने दुनियाँ से अलग कर तो लिया अपना मकाँ

कौन उठा पायेगा हमको ऐसी बेसुध नींद से
होश है जागे हुये हैं, जब सभी को है गुमाँ

बंद कमरों में न आ पायेगी सूरज की 'किरण'
रौशनी दरकार हो तो खोल दो सब खिड़कियाँ

पार मत करना हदें हैवानियत की दोस्तों
गड़ न जाये शर्म से, धरती में बूढ़ा आसमाँ



